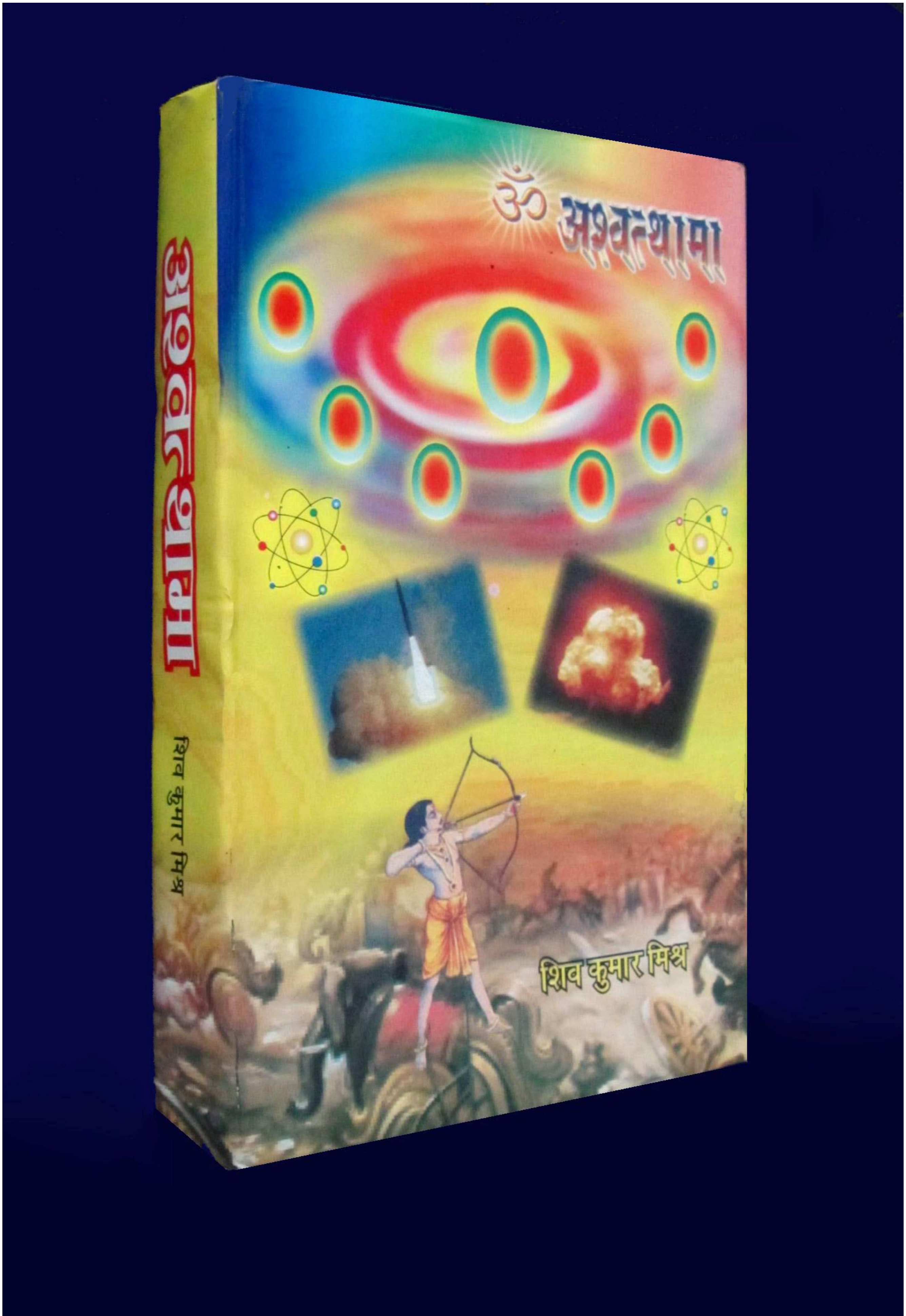
ॐ अश्वत्थामा
शिव कुमार मिश्र
अश्वत्थामा
शिव कुमार मिश्र

अश्वत्थामा

(महाकाव्य)

शिव कुमार मिश्र
आई.ओ.एफ.एस.
संयुक्त महाप्रबन्धक
आयुध निर्माणी, कानपुर

सरस्वती प्रकाशन

49 बौद्धनगर, नौबस्ता, कानपुर - 208 021

पुस्तक का नाम	:	अश्वत्थामा
लेखक का नाम	:	शिवकुमार मिश्र
कापी राइट	:	श्रीमती रत्नेश मिश्रा
प्रकाशक	:	**सरस्वती प्रकाशन** 49 बौद्ध नगर, नौबस्ता, कानपुर - 208 021 फोन- (0512) 2632977
मूल्य	:	छह सौ रुपये मात्र
शब्द सज्जा	:	**सुपर ग्राफिक्स** विश्व बैंक, बर्रा, कानपुर
संस्करण	:	प्रथम 2003
मुद्रक	:	**मधुर प्रिण्टर्स**, किदवई नगर, कानपुर

समर्पण

मानवता करुणा अध्यवसाय सहिष्णुता उदारता तथा ईश्वरप्रेम के जीवन्त प्रतीक पिताजी श्रीयुत् भगवान दयाल मिश्र तथा स्नेह, धर्मनिष्ठता वात्सल्य व सरलता एवं निश्छलता की मूर्ति माताजी श्रीमती रामसहेली को जिनका आशीर्वाद लगातार मिल रहा है।

अनुक्रम

पृष्ठ संख्या

अश्वत्थामा : डॉ. बालशौरि रेड्डी

महाकाव्य अश्वत्थामा - एक दृष्टि : डॉ. मोहन अवस्थी

अश्वत्थामा - आत्म निवेदन : डॉ. ओउम प्रकाश अवस्थी

आत्म निवेदन : शिव कुमार मिश्र

अश्वत्थामा का व्यक्तित्व महाभारत के अनुसार

महाभारतेतर संस्कृत साहित्य में अश्वत्थामा

प्रथम सर्ग : आरम्भ १ - ११

(५६ छन्द)

द्रोण उत्पत्ति : ऋषि भरद्वाज के आश्रम का वर्णन घृताची अप्सरा को स्नान के बाद वस्त्र बदलते गंगा के किनारे ऋषि द्वारा देखना, शुक्रक्षरण, द्रोण की उत्पत्ति, अग्निवेश आश्रम में द्रोण का विद्याध्ययन के लिए जाना, द्रुपद से मित्रता।

द्वितीय सर्ग : उद्भव १२ - १८

(३६ छन्द)

कृप तथा कृपी की उत्पत्ति : ऋषि गौतम के पुत्र शरद्वान की तपस्या से इन्द्र का विचलित होना, तपो भंग हेतु जानपदी नामक अप्सरा को भेजना ऋषि का जानपदी से संयोग, कृप व कृपी की उत्पत्ति, माता व ऋषि द्वारा उन्हें छोड़ देना। शल्य हस्तिनापुर नरेश शान्तनु द्वारा मृगयार्थ वन में जाने पर शिशु युगल की प्राप्ति, उन्हें नगर लाकर पालन-पोषण तथा कृप व कृपी नामकरण।

तृतीय सर्ग : अर्जन १६ - २६

(४३ छन्द)

अग्निवेश आश्रम से विद्या ग्रहण कर युवा द्रोण का अपने पिता भरद्वाज के आश्रम लौटना। पिता द्वारा समाधि लेना, द्रोण की भयंकर तपश्चर्या, पितरों द्वारा स्वप्न में आकर विवाह का आदेश, द्रोण द्वारा कृपी का परिणय, अश्वत्थामा का जन्म।

चतुर्थ सर्ग : अपमान २७ - ५४
(१५६ छन्द)

द्रोण को दिव्यास्त्र की प्राप्ति हेतु परशुराम जी के पास महेन्द्र पर्वत पर जाना, परशुराम द्वारा उन्हें दिव्यास्त्रों का ज्ञान देना, एकाकी कृपी की चिन्ता, द्रोण का अपने आश्रम लौटना, उजाड़ आश्रम में विपन्नता तथा गोधनहीनता से मानसिक ताप, पुत्र के लिए दूध की व्यवस्था हेतु चिन्तन, अपने मित्र द्रुपद का ध्यान आने पर कापिल्यपुरी जाने का निश्चय।

पाञ्चाल नरेश द्रुपद द्वारा बाल सखा द्रोण की उपेक्षा। दुःखी द्रोण का हस्तिनापुर आगमन, गुप्त निवास, भीष्म द्वारा उनसे राजपुत्रों की शिक्षा हेतु आग्रह करना।

राजपुत्रों (कौरवों-पाँडवों) को महारथी बना देना, गुरुदक्षिणा में द्रुपद की पराजय माँगना, पाण्डवों द्वारा द्रुपद को बंदी बनाना, उसके आधे राज्य को ग्रहण कर द्रोण का उसे मुक्त करना। आधा राज्य उत्तर पाञ्चाल अपने पुत्र अश्वत्थामा को देना।

पंचम सर्ग : प्रतिज्ञा ५५ - ६३
(५१ छन्द)

महाभारत के युद्ध में भीष्म तथा उनके बाद द्रोण द्वारा किये गये भारी विनाश से पाण्डवों की चिन्ता। श्रीकृष्ण द्वारा द्रोण वध का उपाय सुझाना, द्रोण वध की सूचना पर अश्वत्थामा का विलाप तथा क्रोध, धृष्टद्युम्न एवं पाण्डवों के विनाश की प्रतिज्ञा।

षष्ठ सर्ग : आक्रोश ६४ - ८७
(८३ छन्द)

द्रोण की मृत्यु पर अर्जुन का शोक, क्रुद्ध अश्वत्थामा द्वारा नारायणास्त्र का प्रयोग। भयानक दृश्य, श्रीकृष्ण द्वारा उसके निवारण का उपाय बताना, सब योद्धाओं द्वारा आत्मसमर्पण, शस्त्र तथा कवच त्याग। अश्वत्थामा की विजय। अश्वत्थामा द्वारा घोर युद्ध, सात्यकि, धृष्टद्युम्न, तथा भीम की पराजय।

पौरव, वृद्धक्षत्र तथा मालवानाथ का वध, चेदि देश के युवराज का वध, अश्वत्थामा द्वारा आग्नेयास्त्र का प्रयोग, अर्जुन व कृष्ण का सकुशल ज्वालापुंज में से निकलना, अश्वत्थामा का क्षोभ, अस्त्र विद्या पर संदेह, व्यास जी का प्रकट होकर अश्वत्थामा को नर व नारायण के रूप में अर्जुन

व कृष्ण का परिचय देना।

सप्तम् सर्ग : विक्रम ८८ - १०२

(७८ छन्द)

कौरव सेनापति के रूप में कर्ण की नियुक्ति का अश्वत्थामा का प्रस्ताव, कर्ण के नेतृत्व में घोर युद्ध। भीम से युद्ध, अर्जुन से युद्ध। पाण्ड्यराज का वध, युधिष्ठिर की पराजय, धृष्टद्युम्न की पराजय, अर्जुन द्वारा द्वन्द्व युद्ध में हस्तक्षेप।

अष्टम् सर्ग : परामर्श १०३ - ११८

(४८ छन्द)

युद्ध के विनाश को देखकर महाभारत के पन्द्रहवें दिन अश्वत्थामा का विविध तर्कों द्वारा दुर्योधन को युद्धविरत होकर शान्ति स्थापना के लिए परामर्श देना। दुर्योधन द्वारा हठ का आश्रय लिये रहना।

नवम् सर्ग : अभिषेक ११९ - १३१

(७१ छन्द)

भीम द्वारा दुर्योधन की जंघाएँ चूर किये जाने का समाचार सुनकर कृपाचार्य, अश्वत्थामा एवं कृतवर्मा का घायल नृपति के पास सरोवर तीर जाना, उसकी दशा देखकर विलाप। मुमूर्षु दुर्योधन द्वारा अश्वत्थामा की अन्तिम सेनापति के रूप में नियुक्ति।

दशम् सर्ग : योजना १३२ - १४७

(४६ छन्द)

रात्रि में उल्लू द्वारा सोते हुए कौवों के विनाश से प्रेरणा ग्रहण कर अश्वत्थामा का रात्रि में पाण्डव शिविर पर आक्रमण की योजना बनाना। कृपाचार्य द्वारा उसे समझाना। अश्वत्थामा का दुराग्रह।

एकादश सर्ग : ताण्डव १४८ - १५४

(३६ छन्द)

रात्रि में सुप्त पाण्डव शिविर में प्रवेश कर अश्वत्थामा द्वारा धृष्टद्युम्न का वध, उत्तमौजा तथा युधामन्यु का लड़ते हुए वध। द्रौपदी के पाँचो पुत्र प्रतिविन्ध्य, सुतसोम, शतानीक, श्रुतकर्मा तथा श्रुतकीर्ति से लड़ते हुए उनका वध, प्रभद्रक गणों सहित शिखण्डी तथा सब पांचाल वीरों का विनाश, कृतवर्मा तथा कृपाचार्य द्वारा भागते हुए योद्धा का वध।

द्वादश सर्ग : अपराध १५५-१७२

(१०६ छन्द)

धृष्टद्युम्न के सारथि द्वारा युधिष्ठिर को जाकर इस महाविनाश की सूचना देना। युधिष्ठिर का शिविर में आमगन, विलाप, नकुल को द्रौपदी को लाने हेतु भेजना, द्रौपदी का आगमन, विलाप, प्रणयोपवेशन, भीम द्वारा अश्वत्थामा का पीछा, व्यास आश्रम में मुनिवेशधारी अश्वत्थामा से क्रोधयुक्त कथोपकथन, श्रीकृष्ण द्वारा भीम की रक्षार्थ युधिष्ठिर व अर्जुन को जाने के लिए समझाना, श्रीकृष्ण व अर्जुन तथा युधिष्ठिर का भी व्यास आश्रम में पहुँचना, भयभीत अश्वत्थामा द्वारा ब्रह्मशिर नामक दिव्यास्त्र का प्रयोग, उसके निवारण के लिए अर्जुन द्वारा ब्रह्मास्त्र का प्रयोग, महाविनाश की आशंका से नारद जी व व्यास जी का प्रकट होना तथा दोनों वीरों से अपने दिव्यास्त्र प्रत्यावर्तन का आदेश देना, अर्जुन द्वारा आज्ञापालन, अश्वत्थामा द्वारा प्रत्यावर्तन प्रयास किन्तु असफलता, अपनी विवशता प्रकट करना तब अजात पाण्डव के ऊपर प्रक्षेप। श्रीकृष्ण का क्रुद्ध होकर अश्वत्थामा को तीन हजार वर्ष तक निर्जन में घाव भरा शरीर लेकर भटकने का शाप, अश्वत्थामा द्वारा अपनी मणि युधिष्ठिर को देना तथा वनगमन।

त्रयोदश सर्ग : प्रायश्चित १७३-१९५

(९२ छन्द)

अश्वत्थामा का एकाकी दुःखमय जीवन व विषाद द्वय चिन्तन, पश्चाताप, शाप अवधि के समापन पर पुनः स्वस्थ होना, व्यास जी से भारत दर्शन की इच्छा प्रकट कर आज्ञा माँगना। भारत के बारे में अपनी धारणा बताना। भारत भ्रमण प्रथम एक हजार वर्ष के परिदृश्य से संतोष।

पुनः भारत भ्रमण, आततायियों द्वारा तथा उपनिवेशवादियों द्वारा की गयी भारत की दुर्दशा से वेदना, गिरते हुए मूल्यों से दुःख, निराश होकर पुनः वनगमन तथा एकान्तवास की इच्छा व्यास जी से प्रकट करना।

चतुर्दश सर्ग : विषाद १९६-२१२

(९३ छन्द)

तृतीय विश्व युद्ध में परमाणु आयुधों के प्रयोग से पृथ्वी पर जीवन का विनाश, एकाकी अश्वत्थामा का विषाद।

पंचदश सर्ग : उद्‌बोधन २१३ - २३०
(१०१ छन्द)

जीवन से हताश तथा जीवविहीन पृथ्वी को देख अत्यन्त द्रवित, अश्वत्थामा द्वारा आत्मघात का संकल्प, श्रीकृष्ण का प्रकट होना, अश्वत्थामा को उद्‌बोधित करना, कर्म तथा परमार्थ का रहस्य बताकर उसे निर्दोष सिद्ध करना तथा उसकी चिरंजीविता सोद्देश्य है यह बताना। उसे भावी सृष्टि में मानव का पथ प्रदर्शन करना होगा। अतः सातो चिरंजीवियों द्वारा विचार हेतु आयोजित सभा में परशुराम के आश्रम महेन्द्र पर्वत स्थित आश्रम जाने की आज्ञा देना।

षोडश सर्ग : स्मृति २३१ - २५८
(११६ छन्द)

श्रीकृष्ण की आज्ञानुसार महेन्द्र पर्वत पर जाते समय समस्त भारत दर्शन का एक बार और संकल्प। दक्षिण से उत्तर तथा पूर्व से पश्चिम सम्पूर्ण भारत का अवलोकन तथा अतीत की संस्कृति व ऐतिहासिक महत्ता को याद कर अश्वत्थामा का विषण्ण होना। अपने जन्म स्थान जाना, पिता द्रोण की याद।

सप्तदश सर्ग : अन्वेषण २५६ - २७८
(८६ छन्द)

एकाकी निर्जन में भटकते दुःखी कृपाचार्य, उनके विविध मनोभाव, अश्वत्थामा की स्मृतियाँ। विह्वल होकर व्यास जी के पास जाना। व्यास जी द्वारा दार्शनिक उद्‌बोधन।

अष्टादश सर्ग : निर्णय २७६ - ३३४
(१६८ छन्द)

महेन्द्र पर्वत का वर्णन, परशुराम जी का वर्णन, परशुराम जी द्वारा छः चिरंजीवियों बलि, विभीषण, हनुमान, व्यास, कृपाचार्य तथा अश्वत्थामा का स्वागत सभा बुलाने के उद्देश्य का उद्‌घाटन।

क्रमशः बलि, विभीषण, हनुमान, कृपाचार्य, अश्वत्थामा तथा व्यास जी द्वारा अपने-अपने विचार व्यक्त करना। नवीन सृष्टि में मानव का आचार कैसा हो? अन्त में सभापति परशुराम जी द्वारा निर्णय तथा जगत की मंगलकामना।

पात्र परिचय १ - ३०

कवि परिचय ३१ - ३४

अश्वत्थामा

(महाकाव्य)

वर्तमान समय में मानव का जीवन इस प्रकार संश्लिष्ट एवम् संघर्षपूर्ण स्थितियों से गुजर रहा है कि उसे शांतिपूर्वक निश्चिंत हो अपने तथा समाज के सम्बन्ध में सोचने व समझने का अवसर छूटता जा रहा है। साथ ही साहित्य एवं कलाओं का आस्वादन करने के मौके से आज का पाठक वंचित होता जा रहा है तो दूसरी ओर कतिपय प्रबुद्ध रचनाकार इन स्थितियों को देखते हुए प्राचीन वाङ्गमय के कालजयी काव्यों में वर्णित घटनाओं तथा आख्यानों पर आत्म विश्लेषण करके आज के संदर्भ में उनकी व्याख्या अपने चिंतन के आधार पर करते जा रहे हैं। आधुनिक बोध की यह प्रवृत्ति बीज रूप में श्री मैथिली शरण गुप्त जी द्वारा रचित 'साकेत', 'यशोधरा', 'पंचवटी' इत्यादि काव्य में प्रस्फुटित हुई तो हरिऔध ने 'प्रिय प्रवास', 'वैदेही वनवास', में वर्तमान को प्रतिबिंबित कराने का प्रयास किया। तदुपरांत सर्वश्री जय शंकर प्रसाद, दिनकर, बाल कृष्ण शर्मा, 'नवीन', निराला, धर्मवीर भारती, नरेश मेहता प्रभृति ने 'कामायनी', 'कुरुक्षेत्र', 'रश्मिरथी', 'उर्मिला', 'राम की शक्तिपूजा', 'अंधा युग', 'संशय की एक रात' के माध्यम से उन स्थितियों की गहराई में जाकर मनोविज्ञान की कसौटी पर उन्हें परखने का प्रयास किया, परिणामस्वरूप अंतर्वाहिनी के रूप में आत्म विश्लेषणपरक चिंतन की यह धारा मंद गति से ही सही, प्रवाहित होती रही। जहाँ रीति ग्रंथों के लक्षणों में छन्दोबद्ध होना काव्य का प्रमुख तत्व माना गया है, वह परंपरा छूटती गई। वर्णवृत्त, देशी छन्द, मुक्तक, क्षणिकाएं, हाइकू इत्यादि विविध रूपों में कविता प्रस्तुत होती रही। अब चिंतन प्रधान काव्य प्रस्तुत होने लगे हैं। इस क्रम में श्रीमती शैल सक्सेना द्वारा रचित 'युगांत' आदि काव्य पाठकों में रुचि व प्रेरणा जागृत करने में सफल रहे।

इस परम्परा में श्री शिव कुमार मिश्र का अवदान गणनीय है। श्री मिश्र जी संस्कृत के गहन अध्येता तथा मर्मज्ञ विद्वान हैं। साथ ही भारतीय संस्कृति के प्रबल पक्षधर हैं। महाभारत के बार-बार अध्ययन करते - करते उनकी दृष्टि अभिशप्त कर्ण के चरित्र पर केन्द्रित हुई और उन्होंने 'कर्ण' को काव्य नायक बनाकर १४ सर्गों में विवध छन्दों में पारंपरिक शैली में "राधेय" नाम से एक प्रबंध काव्य का प्रणयन किया। हिन्दी जगत ने उनके प्रयास को सराहा। इससे प्रेरित होकर उन्होंने १९९६ में महाभारत के ही एक सबल पात्र 'अश्वत्थामा' पर एक महाकाव्य प्रस्तुत करने का संकल्प करके तत्काल उसके सृजन का आरंभ किया और मार्च २००२ तक यह ग्रंथ रूपायित हुआ। यह काव्य १८ सर्गों में संस्कृत एवं हिन्दी के विविध छन्दों में प्रस्तुत हुआ है, जिनकी संख्या १४६७ है। "आत्म निवेदन" में कवि ने स्वयं स्वीकारा है कि व्यास कृत महाभारत में अश्वत्थामा का समग्र जीवन निबद्ध

नहीं हुआ है। महाभारतेतर संस्कृत ग्रंथों, हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में भी अश्वत्थामा विषयक वर्णन मूल कृति से कतिपय स्थानों से हटकर है। मुख्यतः द्रौपदी के पुत्रों के वध तथा उत्तरा के गर्भ पर दिव्यास्त्र प्रक्षेप के प्रसंगों में। इन भ्रांतियों तथा लोकापवाद के निराकरण का रचनाकार ने भरसक प्रयास किया है।

अध्यात्म रामायण में 'अश्वत्थामा' को सात चिरंजीवियों में एक बताया गया है। वे हैं बलि, विभीषण, परशुराम, हनुमान, वेद व्यास, कृपाचार्य और अश्वत्थामा। अश्वत्थामा जैसे महारथी को किन परिस्थितियों में रात को शिविर पर आक्रमण करना पड़ा और किन विवशताओं के वशीभूत हो दिव्यास्त्र को उत्तरा के गर्भ की ओर मोड़ा और श्री कृष्ण का शाप कितने समय तक था, इन प्रसंगों का स्पष्ट चित्रण इस काव्य में प्रस्तुत हुआ है।

इस काव्य की सबसे बड़ी विशेषता है कि अश्वत्थामा के चिरंजीवी होने के प्रसंग में कृतिकार ने एक अतिरंजित कल्पना की है - वह इस प्रकार है - तृतीय विश्वयुद्ध में परमाणु अस्त्रों के प्रयोग से पृथ्वी का समस्त प्राणि - समुदाय विनष्ट हो गया है। निर्जीव धरा उजाड़ पड़ी है। अश्वत्थामा चिरंजीवी होकर व्यथित हृदय को लेकर भटकता रहा है। तब श्रीकृष्ण उन्हें दर्शन देकर समझाते हैं - "तुम्हारी चिरंजीविता सोद्देश्य है। भावी सृष्टि में मानव समुदाय का मार्ग - दर्शन करना है। तुम महेन्द्र पर्वत पर जाकर परशुराम का आशीर्वाद लो और तब वह सातों चिरंजीवी मिलकर विचार करते है। भावी लोक मंगल की कामना के साथ काव्य का समापन होता है।

शिव हो सदा इस जगत का अविरल कृपा शंकर करें ।
भव शूलहर वे प्रीत हो भवशूल सद्यः ही हरें ।
भूतेश भूतों को दिखाएँ, मार्ग श्रेयश धर्म का ।
बहु भूतिप्रद शिति कण्ठ हों शित बन्ध काटें कर्म का ।

काव्य का शुभारंभ प्राकृतिक सौंदर्य के वर्णन के साथ हुआ है। इसके पश्चात वे सृष्टि की क्षण-भंगुरता का परिचय देते हैं।

सकल सृष्टि ही है, प्रवाहमाना मानो यह कहती ।
नहीं एक पल को भी संसृति स्थिर होकर है रहती ।
- - - - - - - -
सबका विलय नियत है निश्चित यहाँ आयु भी विधि की ।

ऋषि भरद्वाज के आश्रम का वर्णन करके कवि ने काव्य वस्तु का बीजारोपण इस प्रकार किया है -

ऋषि भरद्वाज के मित्र पृषत थे, पाञ्चालों के अधिपति ।

उनके प्रिय तनय द्रुपद को भी, वांछित थी अस्त्रों में गति ।
द्विज बालक द्रोण कुमार द्रुपद, दोनों का सख्य गहन था ।
शुभ अग्निवेश आश्रम में, दोनों का लगता अति मन था ।

आगे के छन्दों में द्रोण और द्रुपद की गहरी मैत्री का वर्णन हुआ है। आश्रम से उनके विदा होने का प्रसंग भी पठनीय है -

कौन जाने मिलन होगा, कब कहाँ किस रूप में।
चलेगा जीवन पथिक कब छांव में कब धूप में।

विद्या समाप्ति पर गुरु के आशीर्वाद कैसे हितकारी होते थे -

कहा गुरु ने कि "मंगल हो, तुम्हारी कीर्ति हो जग में,
जितेन्द्रिय हो, रहो निष्काम, निर्भय धर्म को पालो ।"

द्रोणाचार्य की पत्नी कृपी बालक अश्वत्थामा को दूध माँगने पर जो उत्तर देती है, वह मातृत्व का अपनी संतान के प्रति आशाजनक आश्वासन हृदयग्राही है।

दूध देती क्यों नहीं माँ बड़ा भूखा मैं ।
कई दिन से खा रहा हूँ भात सूखा मैं ।
तात आएंगे तभी नव गाय लाएंगे ।
दूध-दधि दोनों तुम्हें जी भर खिलाएंगे ।

लक्ष्मी और सरस्वती के मध्य जो अगाध खाई है, उस अंतर को श्री मिश्र जी ने बड़ी चतुराई से दर्शाया है। द्रुपद द्वारा द्रोणाचार्य की अवमानना का प्रसंग भी द्रष्टव्य है -

कहा तब द्रुपद ने उस कल्पना को ।
करो विश्रांत हे द्विज जल्पना को ।
भिन्न जिसके विचार, चरित्र होते ।
जगत में क्या परस्पर मित्र होते ।

द्रुपद का राज्याहंकार द्रोणाचार्य के मन में प्रतिशोध का बीज वपन करता है, क्योंकि कवि के शब्दों में -

ज्ञान से श्रेष्ठ जिसने वित्त माना ।
ज्ञान धन तपस्वी को दीन जाना ।

तब द्रोण की प्रतिक्रिया अंकुरित हुई -

मन ही मन निश्चय किया, यदि हूँ शास्त्राचार्य ।
नृपमद मर्दन क्यों न हो, भृगु वटु को व्यवहार्य ।

श्री कृष्ण द्रोणाचार्य के व्यक्तित्व की परिभाषा एक ही पंक्ति में देते हैं -

"शस्त्र - शास्त्रों के मिलन की पूर्णता व्यक्तित्व है।"

आगे युधिष्ठिर को समझाते हैं कि महारथी द्रोणाचार्य के हाथ में जब तक शस्त्र रहेगा, उनपर विजय पाना असंभव है। अतः जर्जर प्रथाओं को तोड़कर युक्ति से काम लो। द्रोणाचार्य की मृत्यु के उपाय का यह संकेत मार्मिक है -

यह सुनिश्चित है कि जव तक अस्त्र है गुरु हाथ में ।
जय चलेगी हो वशंवद सुयोधन के साथ में।
युक्ति का आश्रय युधिष्ठिर लो यहाँ वल है वृथा।
बदलनी है दिशा रण की तोड़कर जर्जर प्रथा ।।

राजनीति व कूटनीति की चाल कैसी टेढ़ी होती है, यह उसका प्रत्यक्ष दृष्टांत है। अश्वत्थामा के रण कौशल का वर्णन भी अद्‌भुत वन पड़ा है। कवि के शब्दों में पढ़िए-

तब अश्वत्थामा ने झट से, धृष्टद्युम्न के मारा तीर ।
- - - - - - - -
पार्थ बढ़े बलवान भीम भी, पौरव वृद्धक्षत्र रणधीर ।
चला चेदि युवराज सुदर्शन, मालवेश के अनुपम वीर ।
लिया घेर गौतमी पुत्र को, पाँच-पाँच मारे शित बाण ।
सबके एक साथ काटे शर, कौशल का दे दिया प्रमाण ।।

अपने पिता की मृत्यु से क्रुद्ध अश्वत्थामा पाँडवों का अंत करने का संकल्प करके अपने दिव्यास्त्रों का प्रयोग करना चाहते है और दिव्यास्त्र प्रक्षेप के बाद भी अर्जुन व कृष्ण के बच जाने पर वे सदोष दिव्यास्त्र को मानते हैं। तब व्यास जी प्रकट होकर उसका रहस्य उद्‌घाटित करते हैं, यह प्रसंग भी मार्मिक है -

प्रकट तब हुए स्वयं भू रूद्र, जगत के कारण वे भूतेश।

और घोषित करते हैं -

जगत के पालन हेतु सदैव बचाने हेतु धर्म का सार ।
वही नारायण करूणावान, लोक में लेते हैं अवतार ।

वही नारायण हैं वे कृष्ण, धृष्टता इनके प्रति है त्याज्य ।

इस पर अश्वत्थामा का अभिमान और अवसाद मिट गया, उनकी बुद्धि स्थिर हुई और उनकी मनीषा दीप्त हुई। तब उनके समक्ष वे नतमस्तक हुए। फिर उन्होंने अर्जुन का भेद भी खोल दिया -

पार्थ है नर ऋषि के अवतार, अतः मानो मत मन में खेद।

अर्जुन और अश्वत्थामा दोनों शिवजी से दिव्यास्त्र प्राप्त कर चुके थे। इस प्रकार वे दोनों गुरुभाई ठहरे। परिणामस्वरूप अश्वत्थामा ने पांडवों के वध का संकल्प त्याग दिया फिर युद्ध की विभीषिका एवं उसके दुष्परिणामों का रहस्य कवि ने हृदय स्पर्शी शब्दों में उद्घाटित किया है -

'पीड़ादायक है अतीव नरता को युद्ध में झोंकना' ।
'क्षुद्रों के अभिमान की बलि चढ़े, देखो महावीर हैं' ।
'भोगेगी फल धारिणी, मनुज के गंभीर दुष्कर्म का'।
'खो देंगे सब कोश संचित अहा ! दुष्प्राप्य विज्ञान का' ।

इन पंक्तियों में कवि ने भूत एवं भविष्य के महायुद्धों के दुष्परिणामों की ओर चेतावनी दी है। मानव समाज को आज संयमित होकर शांति की स्थापना को अपना लक्ष्य बनाना पड़ेगा।

यत्र-तत्र अन्य प्रसंगों में राधेय के अहंकारों का वर्णन सजीव बन पड़ा है। अभिमानी दुर्योधन को अपना अहंकार त्यागने और पांडवों के साथ मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने का अनुरोध बार-बार स्मरण करने योग्य है -

कौरवेश तुम भी अग्रज से, अर्जुन से हो हारे ।
व्यथित हुए हो भीमसेन से, सात्यकि ने शर मारे ।
धृष्टद्युम्न से हुए पराजित, परिभव मिला नकुल से।
अब भी जागो करो वैर मत, अपने उत्तम कुल से।

सुयोधन जब अश्वत्थामा को सेनापति का दायित्व सौंपने का आशय व्यक्त करते हैं तब वे उन्हें समझाते हैं। यह प्रसंग दृष्टव्य है -

देख चुके भीषण विनाश हम, सत्रह दिन के रण का।
विश्लेषण अब तो कर लो इस हिंसा के कारण का ।
- - - - - - -
नरपति धरणी को मत तौलो, तुम अनर्घ नरता से ।

किसके पति कहलाओगे, जब नर ही नहीं बचेंगे ।

इसलिए मैत्री जो चार प्रकार से यानि सहज, संधि, प्रीति और विक्रम से संभव है, इनमें से किसी विधि से पांडवों से मैत्री करो -

मैं भी लोक हितार्थ जनक का शोक सरूँगा विस्मृत ।
भूलूँगा पांचाल नाश की विषम प्रतिज्ञा सत्वर ।
तपोनिरत होना है मुझको, त्याग जगत यह नश्वर ।

इस प्रकार श्री मिश्र जी ने अश्वत्थामा के चरित्र को अत्यंत उदात्त चित्रित किया है। अंत में वे इस भयावहता की ओर भी संकेत करते हैं -

मिली विजय भी यदि हे राजन इतना सब कुछ खोकर ।
बैठोगे जब सिंहासन पर, बिखरे तंतु सँजोकर ।
राजमहल में भी देखोगे, श्वेत वसन में लिपटी ।
संधि नीर शीतल कर अर्पित करो प्रशांत चिता को ।
करिपुर से तुम करो प्रशासन, इन्द्रप्रस्थ से धर्मज ।

अंत में कवि नियति की शरण में जाते हैं। उन्हीं के शब्दों में -

बोध विनाशशील प्राणी को कहाँ जगत में भाया ।
तर्क बुद्धि से या उद्यम से नियति न टलती जग में ।

कवि की यह अनूठी परिकल्पना कि सृष्टि विनाश के पश्चात चिरंजीवी पुनः सृष्टि की रचना के सम्बन्ध में जो मंत्रणा करते हैं, वह दृष्टव्य है -

सभी चिरंजीवी इस कारण, हमने यहाँ बुलाए ।
भावी सर्जन को दूषण से कैसे विबुध बचाएं ।
चिंतन इसी बिन्दु से आगे का हमको करना है ।
नव सर्जन में भी उपजेगी, फिर से अहा असुरता ।

अंत में कवि मंगल कामना कराते हैं -

शक्ति और शिव दोनों का ही, करे मनुज आराधन ।
निज विकास के साथ बने, वह लोक भूति का साधन ।
शिव के बिना शक्ति अनियंत्रित, है अपाय का कारण ।
दोनों का संयोग कर रहा, सकल सृष्टि का धारण ।

शिव हो सदा इस जगत का अविरल कृपा शंकर करं ।

ज्वलंत प्रश्न

श्री शिव कुमार मिश्र ने इस ज्वलंत प्रश्न की ओर संकेत किया है कि पाश्चात्य विद्वान निरंतर वैज्ञानिक उपकरणों तथा संसाधनों तथा अपनी उत्कृष्ट प्रतिभा के उपयोग से मानव सभ्यता के मूल की जानकारी प्राप्त कर अनेक प्रागैतिहासिक वैज्ञानिक प्रमाणों से जन श्रुतियों तथा प्राचीन महाकाव्यों में तथा धार्मिक ग्रंथों में वर्णित घटनाओं व स्थानों की सत्यता को वृत्तान्त जिन्हे मिथकीय वृत्तान्त मानकर भारतीय उपेक्षा एवं तिरस्कृत दृष्टि से देख रहे हैं, सिद्ध करने का प्रयास कर रहे हैं, जबकि हमारे यहाँ उल्टी गंगा वह रही है। यहाँ के तथा कथित विद्वान व बुद्धिजीवी पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित होकर हमारी सांस्कृतिक विरासत को झुठलाने में सक्रिय हैं। कोई अयोध्या को गांधार देश में सिद्ध करने का प्रयास कर रहे हैं तो कोई लंका को मध्य प्रदेश के दण्डकारण्य में ढूँढ़ता है, तो कोई रामायण के पात्रों को काल्पनिक बताकर संतोष की सांस ले रहे हैं। दर - असर प्रतिवद्धता के साथ सत्य का निरूपण करने की दृष्टि से खोज का कार्य नहीं हो रहा है। परन्तु मिश्र जी के कथनानुसार महाभारत कालीन अस्त्र - शस्त्र तथा अन्य उपकरण आज दूसरे रूपों में प्रयोग में लाए जा रहे हैं।

इस काव्य के प्रणयन में श्री शिव कुमार मिश्र ने एक युगीन समस्या को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अपने ढंग से परिभाषित करने का सफल प्रयास किया है। तत्सम प्रधान शैली में विविध छन्दों में एक संदेशात्मक प्रवंध काव्य का प्रणयन करके प्रबंध काव्य-धारा को गतिशील बनाया है और आधुनिक काव्य जगत में अपनी पहचान बनाने में सफल हुए हैं।

अतः मैं उनके इस प्रयास के लिए हार्दिक अभिनंदन करता हूँ।

-डॉ. बालशौरि रेड्डी

महाकाव्य 'अश्वत्थामा' : एक दृष्टि

(रचनाकार - श्री शिवकुमार मिश्र)

आज के आपाधापी-रत, अन्यों की उपेक्षा करने वाले अहंवादी युग में, जब लोगों को वर्तमान महान आत्माओं के प्रति ही कोई लगाव नहीं है, तब उन्हें अपने अतीत के आदर्श पुरुषों के विषय में जानने की फ़ुरसत कैसे मिल सकती है? यही कारण है कि आज हमारे ऐतिहासिक पौराणिक चरित्रों के बारे में जानने की इच्छा मर चुकी है। अब ऐसे महापुरुषों पर लिखे प्रबन्ध काव्यों के पठन-पाठन से लोग नितान्त विरत हो रहे हैं।

इन विषम परिस्थितियों में श्री शिवकुमार मिश्र द्वारा 'अश्वत्थामा' महाकाव्य की रचना करना एक सुखद आश्चर्य है। संस्कृत के गम्भीर अध्येता होने के कारण मिश्र जी ने आकर ग्रन्थ 'महाभारत' का तो अध्ययन किया ही और 'महाभारत' से सम्बद्ध संस्कृत वाङ्मय को भी खँगाला, लेकिन इनके अतिरिक्त हिन्दी के तथा अन्यान्य भारतीय भाषाओं में लिखे महाभारताधारित ग्रन्थों को भी ध्यानपूर्वक पढ़ा है। इतनी विशाल अध्ययन सम्पत्ति के बल पर उन्होंने भ्रमवश अश्वत्थामा के विरुद्ध प्रचारित दुर्भावनाओं को सप्रमाण निरस्त करके उसके चरित्र का वास्तविक निष्कलंक रूप पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है।

यह कार्य सरल नहीं था। कवि ने महाभारत के 'सौप्तिक पर्व' का विशेष सन्दर्भ देकर इस तथ्य पर प्रकाश डाला कि अश्वत्थामा ने प्रसुप्त पाण्डव-पुत्रों का वध नहीं किया था। वे सब जाग्रतावस्था में उससे लड़े थे। तथैव उसने ब्रह्मास्त्र का उत्तरा के गर्भस्थ शिशु पर प्रहार भी नहीं किया था। वह तो पाण्डवों का विनाश करना चाहता था। परन्तु अज्ञात ब्रह्मास्त्र प्रतिसंहरणविद्या होने के कारण उसने व्यास की सम्मति से उस ब्रह्मास्त्र को गर्भस्थ शिशु को लक्ष्य बनाकर शान्त किया था।

भगवान श्रीकृष्ण ने उसके इस कृत्य पर क्रोधित होकर उसे ३००० वर्षों तक पूयरक्तगंध युक्त शरीर लिए इस भूतल के निर्जन स्थानों पर भटकते रहने का शाप दिया था। शाप की अवधि कब की खत्म हो चुकी है और इस समय चिरजीवी अश्वत्थामा नीरोग शरीर होकर इसी धरती पर विचरण कर रहे हैं।

महाभारत में दिव्यास्त्रों के दुरुपयोग से जो विनाश हुआ उसका कारण था असंयम। अश्वत्थामा को महाभारत में शस्त्रज्ञान में राम के समान, युद्ध में इन्द्र के समान, विक्रम में कार्तवीर्य के समान और बुद्धि में बृहस्पति के समान बतलाया गया है। ऐसा ब्राह्मण भी जब क्रोधोन्मत्ततावश संयमहीन होकर भयंकर विनाश कर सकता है, तो लोभ, अहंकार ईर्ष्या, क्रूरता आदि दुष्प्रवृत्तियों से ईरित वर्तमानयुगीन मानव के बारे में क्या कहा जाये? अतः नाश अवश्यम्भावी।

लेकिन नाश के बाद निर्माण की प्रक्रिया अनिवार्य होती है। उसे ध्यान में रखते हुए कवि शिवकुमार मिश्र की उर्वरा कल्पना ने 'विषाद' सर्ग के अन्तर्गत अश्वत्थामा के दिग्दिगन्तपरिव्याप्त विषाद को ६७ छन्दों में वाणी दी है। वह सोचता है - ''जीवहीना क्षिति हुई अशेष भूतधात्री है केवल नाम।'' और खुद को सम्बोधित करते हुए कहता है- ''जीत कहाँ, वह था मन विभ्रम, द्रौणि महा तव हार हुई है।' वह अपनी मनोदशा वस्तुतः पिण्डित पश्चातापरूप में इस प्रकार व्यंजित करता है-

भूतल-भार स्वरूप बना यह जीवन और कहाँ तक ढोऊँ ।
सूख गया दृगनीर निरन्तर, हूँ परितप्त कहाँ तक रोऊँ।
शाप बना यह आयत जीवन रूठ गई चिर नींद न सोऊँ ।
पावन कार्य सुवारि नहीं हतभाग्य कथंविधि पातक धोऊँ ।।

सच्चे पश्चाताप से बड़ा चित्तशोधक कोई उपाय नहीं है और 'चित्तं विशुद्धं' के लिए प्रसिद्ध है। 'यं वासुदेवं कवयो वदन्ति'। यानी विशुद्ध चित्त में वासुदेव का आविर्भाव होता है। इसलिए चरम विषाद के फलस्वरूप कवि ने उपयुक्त कल्पना की है कि अश्वत्थामा को श्रीकृष्ण की वाणी सुनाई पड़ती है, फिर उसके औत्कण्ठ्यपूर्ण आग्रह पर भगवान् उसे दर्शन देते हैं -

''कहाँ छिपे हो कृष्ण हमारे सम्मुख आओ।
शप्त और उत्तप्त दीन जन को समझाओ।
कहा कृष्ण ने मुझे जानकर भी मानोगे ।
प्रतिभटता या पुनः हमारे प्रति ठानोगे ।।''
''जाना होता प्रभो तुम्हें सम्यक् द्वापर में ।
नहीं भटकता द्रौणि भूमि पर काल अपर में ।।''
''था स्रुवा होना उचित जिस हाथ में शित खंग था ।
चन्दनोचित गात्र था पर रुधिर रंजित अंग था ।
दुर्वचन थे जीभ पर क्या थीं ऋचाएं वेद की ।
कहाँ तक बातें बताऊँ कृष्ण अपने खेद की ।।''

उसके दुष्कर्मों का विहंगावलोकन करवाने के बाद श्रीकृष्ण कहते हैं- ''अब शोक करो मत प्यारे अश्वत्थामा।'' क्योंकि तुम निष्पाप हो चुके हो, तुम्हारी चिरजीविता सोद्देश्य है। तुम्हें भावी सृष्टि में मानवों का नायक बनाकर मार्गदर्शन करना है।

प्रश्न उठ सकता है कि केवल अश्वत्थामा ही चिरजीवी नहीं है। अन्य छः व्यक्ति और भी हैं, जो चिरजीवी हैं।

''अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमानुश्च विभीषणः ।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ।।''

यदि अश्वत्थामा की चिरजीविता सोद्देश्य है तो क्या बाकी की चिरजीविता का कुछ भी उद्देश्य नहीं है।

यहीं पर कवि-कल्पना की सच्ची परख हुई है। कवि शिवकुमार मिश्र ने दिखाया है कि वे छह चिरजीवी महेन्द्र पर्वत पर परशुराम की अध्यक्षता में बैठकर भावी सृष्टि के बारे में विचार कर रहे हैं। अतएव श्रीकृष्ण अश्वत्थामा को वहाँ जाने की सलाह देते हैं कि वहाँ सात चिरजीवी मिलकर विचार करेंगे कि अगली सृष्टि में मानव का आचरण कैसा हो?

अस्तु सातों चिरजीवी मिलकर अपने-अपने विचार रखते हैं और निर्णय के पश्चात् यह मंगलकामना करते हैं -

''हम सबका विचार-विनिमय यह बने भूत हितकारी !
नर्तन करे पुनः यह संसृति प्रकटे सुषमा सारी ।।''

और मंगल हेतु शिव प्रार्थना करते हैं, क्योंकि शिवशंकर कल्याण एवं शान्ति के स्वरूप हैं -

''शिव हो सदा इस जगत् का अविरल कृपा शंकर करें ।
भवशूलहर वे प्रीत हों भव-शूल सद्यः ही हरें।
भूतेश भूतों को दिखाएँ मार्ग श्रेयस धर्म का ।
बहु भूतिप्रद शितिकण्ठ हों, शित बन्ध काटें कर्म का ।।''

इस प्रकार शिव के प्रति की गयी इस प्रार्थना के साथ सभा का विसर्जन और कवि शिव कुमार के काव्य का समापन होता है।

मेरी कामना है कि कवि की कल्पना फलवती हो और 'अश्वत्थामा' महाकाव्य मानवता को नूतन रूप प्रदान करके विशद यश प्राप्त करे।

- डॉ. मोहन अवस्थी
डी. फिल्., डी. लिट्.
पूर्व प्रोफेसर हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

''अश्वत्थामा''

(महाकाव्य)

(रचनाकार - श्री शिवकुमार मिश्र)

अश्वत्थामा महाभारत का पौराणिक मिथकीय चरित्र है। अपने पिता द्रोण से युद्ध विद्या भगवान शंकर परशुराम से उसे दिव्यास्त्रों की प्राप्ति भी हुई। महाभारत के कौरव पक्षीय ग्यारह महारथियों में उसकी गणना है। धर्मराज युधिष्ठिर के द्वारा 'अश्वत्थामा हतः' की पुष्टि कर दिये जाने पर द्रोणाचार्य का युद्ध विरत होकर समाधि लेना और उसी समय द्रुपद-पुत्र धृष्टद्युम्न के द्वारा उनका सिर काट लेना एक ऐसी घटना है जो पाण्डव पक्ष द्वारा नैतिकता एवं मर्यादा का पूर्णतः उल्लंघन था। द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने इस घटना से क्रोधित हो अपनी शक्तियों का प्रयोग किया। दुर्योधन को छल से गदायुद्ध में भी भीम द्वारा पराजित कर दिये जाने पर मरणासन्न अवस्था में दुर्योधन ने अश्वत्थामा को सेनापति बनाया। रात्रि के समय अश्वत्थामा ने पाण्डव शिविर पर आक्रमण करके धृष्टद्युम्न समेत सभी पांचालों, द्रोपदी पुत्रों तथा पाण्डवों की सहायक सेना का बध कर दिया। दिव्यास्त्र के प्रयोग से भ्रूण हत्या तक का प्रयास किया गया तथा अश्वत्थामा की मणि छीनकर उसे विक्षिप्त अवस्था में निर्जन स्थानों में विचरण के लिए छोड़ दिया गया। महाभारत में सौप्तिक पर्व का नायक यही अश्वत्थामा है।

इस पुनीत पौराणिक कथानक को लेकर श्री शिवकुमार मिश्र ने 'अश्वत्थामा' संबोध्य महाकाव्य लिखा। आज साहित्य जगत में रचनाकारों का महाकाव्य लेखन से टूटता संकल्प प्राचीन छंदों में खण्डित विश्वास तथा पारम्परिक कथानक की उपेक्षाजन्य आस्था दिखाई देती है। लेकिन श्री मिश्र ने लेखकीय विश्वास और परम्परा के सातत्य को स्थापित करने के लिए महाकाव्य की रचना के लिए अपने कवि को प्रस्तुत किया। अठारह सर्गों में विभाजित लगभग चालीस से ऊपर विभिन्न प्रकार के शास्त्र सम्मत छन्दों का प्रयोग तथा महाकाव्य के लक्षणों का पालन करते हुए 'अश्वत्थामा' महाकाव्य लिखा। श्री मिश्र का यह महाकाव्य विषयवस्तु और शैली में उस प्राचीनता का संवाहक हुआ जिसकी परम्परा को छोड़े हुए लगभग साठ-सत्तर वर्ष हो चुके हैं।

महाभारत के इस भयानक और रोमांचकारी कथानक को लेकर आज के युग सन्दर्भ में विश्वयुद्ध की विभीषिका से जोड़कर प्रस्तुत किया तथा इससे त्राण पाने के लिए एक ऐसी परिषद की कल्पना की जो मानवजाति को इस युद्ध संकट से उत्पन्न विनाश से मुक्ति दिला सकती है। इसके लिए मिश्र जी ने परशुराम आश्रम में सात अमर जीवियों को एकत्रकर युद्ध से आक्रान्त विश्व को परित्राण दिलाने के

लिए विचार-मंथन कराया है। जैसे आज शान्तिकामी विकसित और विकासशील देशों के प्रमुख विचार मंथन करते हैं। संसार में असमानता ही युद्ध का कारण है, वह किसी भी प्रकार की हो सकती है। रंगभेद, प्रजाति भेद, आर्थिक असमानता, हथियारों की गैर बराबरी, सीमाओं की अनिश्चितता, बड़े छोटे के बीच की नाइंसाफी आदि ऐसे कारण हैं जिनसे आये दिन कोई शक्तिशाली देश कम शक्तिशाली पर आक्रामक हो उठता है और युद्ध की बड़ी सम्भावनाएं बनने लगती हैं। इस महत्वपूर्ण ज्वलंत और अन्तर्राष्ट्रीय समस्या पर श्री मिश्र जी के द्वारा निर्मित परिषद जिसमें परशुराम, बलि, विभीषण, हनुमान, कृपाचार्य, व्यास और अश्वत्थामा हैं, विचार करते हैं।

श्री मिश्र जी इसके पूर्व कर्ण के जीवन पर आधारित ''राधेय'' नामक महाकाव्य लिख चुके हैं जो सहृदयों, पाठकों के बीच समादृत भी हुआ। 'अश्वत्थामा' का लेखन कर मिश्र जी ने यह प्रतीति करा दी है कि उनका लेखन स्वतः आत्मतोष प्रधान है और उनमें संस्कृत के आर्ष और पौराणिक साहित्य के प्रति गहरी रुचि और साधना का पर्याप्त साहस है। अश्वत्थामा उस प्राचीनता का संवाहक है, जिसे आज का शास्त्र-आक्षेपी भूलता जा रहा है। 'अश्वत्थामा' का लेखन उसी अप्रासंगिक मान ली गयी है विषय-वस्तु और रचनाशिल्प को न केवल पुनर्जीवित करना है बल्कि उसे प्रासंगिक भी बनाना है। 'अश्वत्थामा' महाकाव्य आज की ज्वलंत युद्ध समस्या के समाधान के लिए ऐसे विकल्पों की खोज है, जिसमें सभी चिरंजीवी अपनी-अपनी परिस्थितियों से प्राप्त ज्ञान का अमृत प्रदान करते हैं। अश्वत्थामा मात्र नर प्रकृति की ही रक्षा के लिए चिन्तित नहीं है बल्कि उसमें मानवेतर प्रकति की भी सुरक्षा और सम्पन्नता का दायित्वबोध है। 'अश्वत्थामा' का कवि सम्पूर्णता में सम्पूर्ण विराट विश्व जिसमें मात्र पृथ्वी की भी सुरक्षा और सम्पन्नता का दायित्व बोध है। 'अश्वत्थामा' का कवि सम्पूर्णता में सम्पूर्ण विराट विश्व जिसमें मात्र पृथ्वी तक ही नहीं, समस्त ग्रहों, उपग्रहों तक अपने करुणा और शान्ति के बीज वपन करने का अभिलाषी है।

नायिका विहीन यह महाकाव्य मानव सद्वृत्तियों का संवाहक बनकर साहित्य जगत में आ रहा है। संस्कृत की प्रौढ़ पृष्ठभूमि होने के कारण कवि के द्वारा प्रयुक्त शब्द कहीं-कहीं व्यंजना व्यापार में यदि विराम कारक होंगे लेकिन कविकुल परम्परा अपने सहृदय पाठक स्वयं चुनती है। मेरी कामना है कि उनका महाकाव्य में करुणा के प्रसार का जो महत् उद्देश्य है, वह उद्देश्य दिग्-दिगन्त व्यापी हो।

- डॉ. ओउम प्रकाश अवस्थी
पी. एच-डी., डी. लिट्.
सेवानिवृत्त अध्यक्ष/हिन्दी विभाग
परास्नातक महाविद्यालय, फते हपु र (उ० प्र०)

आत्म निवेदन

वैज्ञानिक फर्मी, आटोहान तथा आइंस्टीन या एडवर्ड टेलर ने कभी सोचा भी नहीं होगा कि उनके शोध कार्य और स्थापनाएं मनुष्य जाति के अस्तित्व पर ही प्रश्न चिह्न लगा देंगी। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा परमाणु बम के विकास हेतु जिस मैन हट्टन प्रोजेक्ट को प्रारंभ किया गया था, तथा जिसमें अमेरिका, ब्रिटेन तथा यूरोप के कई आप्रवासी वैज्ञानिक रात-दिन लगे रहे, का फल १६ जुलाई, १९४५ को प्राप्त हुआ जब रावर्ट ओपेन हाइमर की अध्यक्षता में न्यू मैक्सिको राज्य के अलबुकर्क नगर से १७३ किमी. दूर एलामोगोर्डो एयर बेस के पास फिजन प्रक्रिया पर आधारित प्रथम परमाणु विस्फोट, जिसका नाम ट्रिनिटी रखा गया था, किया गया। यह दिन मानवता के लिए दुर्भाग्य का दिन था क्योंकि इसके पश्चात मनुष्य के हाथों महाविनाशक शक्ति लग गई थी। इसका प्रयोग शीघ्र ही निर्दोष मानवों के घोर विनाश के लिए किया गया।

तत्कालीन सुरक्षा सलाहकार हेनरी एल. स्टिम्सन ने यू. एस. ए. के राष्ट्रपति हेरी ट्रूमैन को प्रेरित किया कि जापानियों के आत्मसमर्पण का उपाय है उन पर परमाणु बम का प्रहार। यह प्रस्ताव मान्य हुआ और ६ अगस्त १९४५ को प्रातः बी २९ विमान, जिसका नाम 'एनोला गे' था, से लिटिल बॉय नामक बम हिरोशिमा पर गिराया गया जिसकी विस्फोटक शक्ति १७ किलो टन थी अर्थात १७००० टन टी. एन. टी. की विस्फोटक शक्ति के बराबर। इसके प्रहार से कुछ ही क्षणों में ६० प्रतिशत शहर नष्ट हो गया। जापानियों पर अगला प्रहार ८ अगस्त, १९४५ को किया गया। अबकी बार २१ किलो टन का प्लूटोनियम आधारित बम जिसका नाम 'फैट मैन' था, नागाशाकी पर गिराया गया जिससे तुरंत ४० प्रतिशत शहर नष्ट हो गया। जापान ने आत्म समर्पण कर दिया, अमेरिका का उद्देश्य पूरा हुआ किन्तु लाखों निर्दोष लोगों के प्राण लेकर।

परमाणु बम की उपयोगिता शक्तिशाली देशों के शासकों और तानाशाहों को ज्ञात हुई तो कौन पीछे रहता, विभिन्न देशों में शोध कार्य चल रहे थे और २९ अगस्त १९४९ में यू. एस. एस. आर. ने, ०३ अक्टूबर १९५२ में ब्रिटेन ने, १३ फरवरी १९६० में फ्रॉंस ने और १६ अक्टूबर १९६४ में चीन ने परमाणु बमों के सफल परीक्षण किए।

यू. एस. ए. ने इस नाभिकीय दौड़ को और आगे बढ़ाया तथा फ्यूजन प्रक्रिया पर आधारित हाइड्रोजन बम का परीक्षण ०१ नवम्बर १९५२ को एनीवेटाक प्रवाल द्वीप पर किया गया। इस बम के जनक एडवर्ड टेलर थे, अन्य देश भी पीछे न

रहे। रूस में अगस्त १६५३ में, ब्रिटेन ने मई १६५७ में, चीन ने १६६७ में और फ्रांस ने १६६८ में यह क्षमता प्राप्त कर ली।

हाइड्रोजन बम की विस्फोटक क्षमता इतनी अधिक थी कि उसके मापन के लिए अब किलोटन इकाई पर्याप्त न रही और मेगाटन इकाई का प्रयोग किया गया जिसका अर्थ है दस लाख टन टी. एन. टी. के बराबर विस्फोटक शक्ति। विशाल बमों का निर्माण हुआ, रूस निर्मित एस. एस. - १८ का वार हेड २० मेगाटन का था तो अमेरिका की टाइटन - II मिसाइल पर ६ मेगाटन का वार हेड लगा था। और ऐसी मिसाइलें दोनों देशों के पास सैकड़ो की संख्या में हैं।

आज के विश्व में कोई तकनीक अधिक दिनों तक गुप्त नहीं रखी जा सकती। उसका प्रसार रुकता नहीं है। परमाणु अप्रसार संधि (एन. पी. टी) जैसे प्रयास असफल सिद्ध हुए हैं। आई. ए. ई. ए. के निरीक्षणों के रहते हुए भी विभिन्न देशों नें अपनी परमाणु बम विकास की गुप्त योजनाओं को सफलता पूर्वक आगे बढ़ाया है। आज पाँच महाशक्तियों तक ही परमाणु बम सीमित नहीं है। इसराइल, दक्षिण अफ्रीका यह क्षमता प्राप्त कर चुके हैं, भारत ने १६७४ में एटम बम और १६६६ में हाईड्रोजन बम की क्षमता हासिल कर ली है। पाकिस्तान ने १६६६ में ही एटम बम के सफल परीक्षण किए हैं। उत्तर कोरिया यह क्षमता प्राप्त कर चुका है तथा ईरान, ब्राजील और अर्जेंटाइना में शोध कार्य चल रहे हैं। जापान और जर्मनी के पास तकनीकी क्षमता है, वे इच्छा होने पर परमाणु बम बना सकते हैं। इस प्रकार यह महाविनाशक आयुध अनेक देशों के पास हो गया है।

शीतयुद्ध के दौरान अमेरिका और रूस के मध्य हथियारों की जो अंधी दौड़ चली, उसका परिणाम था कि १६६७ में यू. एस. ए. के पास कुल ३२ हजार परमाणु बम थे और १६८८ तक यू. एस. एस. आर. के पास भी ३३ हजार परमाणु बम थे। उस समय एम. ए. डी. (Mutual Assured Destruction) जैसी अवधारणाओं से पारस्परिक भय के आधार पर शांति कायम रही। किन्तु अब सोवियत संघ के विखंडन से यू. एस. ए. संसार की सर्वोपरि शक्ति बन गया है।

यूगोस्लाविया, अफगानिस्तान और फिर ईराक में जो कुछ हुआ, उसके बाद राष्ट्र यह सोचने को विवश हैं कि यदि उन्हें अपनी प्रभुसत्ता बनाए रखनी है तो उन्हें आर्थिक और सैनिक दृष्टि से शक्तिशाली बनना होगा। सैनिक शक्ति का अर्थ है परमाणु क्षमता प्राप्त करना।

परमाणु बमों के विकास के पश्चात उनको लक्ष्य तक ले जाने वाली प्रणालियों का विकास प्रारंभ हुआ, मध्यम दूरी के (IRBM) तथा अंतर-महाद्वीपीय (ICBM) प्रक्षेपास्त्र विकसित किए गये। जर्मनी द्वारा निर्मित वी-२ राकेट की उपयोगिता सभी को प्रत्यक्ष थी। इसी प्रविधि को आगे बढ़ाते हुए यू. एस. एस. आर. ने पहला ICBMSS6 १६५६ में निर्मित किया। यू. एस. ए. द्वारा भी एटलस १६५६ में

तथा टाइटन-१ ICBM १६६१ में बनाए गए। प्रविधि आगे बढ़ती गई और वैज्ञानिकों ने पनडुब्बी से छोड़ी जाने वाली मिसाइलें भी विकसित कर ली। रूस ने एस. एल. वी. एम., एस. एस. एन.४ १६५५ में विकसित कर लिया तो अमेरिका ने इसी प्रकार की क्षमता से युक्त पोलरिस मिसाइल १६५६ में निर्मित कर ली। रूस ने यदि १६६७ में मल्टीपल रि-एंट्री विहिकल क्षमता युक्त एस. एस.६ प्रक्षेपास्त्र बनाया तो अमेरिका ने भी इससे एक कदम आगे बढ़कर मल्टीपल इंडिपेंडेंटली टारगेटेड रि-एंट्रीविहिकल पोलरिस ए-३ १६६४ में और मान्यूट मैन १६७० में विकसित कर लिया। अमेरिका ने पोसिडोन नामक एम. आई. आर. वी. एस. एल. वी. एम. १६७० में बना लिए तो रूस भी पीछे नहीं रहा और इसी तकनीक पर आधारित एस. एस. एन. - १८ मिसाइल १६७८ में बना ली गई। प्रक्षेपस्त्रों की दौड़ में अन्य देश भी सम्मिलित हो गए। फ्रांस ने एम-४ तथा चीन ने सी. एस. एस. - ३ १६७८ और सी. एस. एस. -४ आई. सी. वी. एम. १६८० में बनाए, जिन्हें वे डांग फेंग अर्थात ईस्ट विंड कहते है। मिसाइल टेक्नालॉजी के प्रसार को रोकने के बहुत प्रयास किए गये और एम. टी. सी. आर. संधि की गई। किन्तु यह प्रसार जारी रहा। उत्तर कोरिया ने नोडॉग मिसाइलें तथा भारत नें पृथ्वी तथा अग्नि मिसाइलें तथा पाकिस्तान ने चीन द्वारा प्रदत्त एम - ११ मिसाइलों के आधार पर गौरी मिसाइलें बना ली हैं, रूस द्वारा दी गई कम दूरी स्कड मिसाइलें ईराक और ईरान जैसे देशों के पास भी है।

परमाणु बमों और उनको लक्ष्य तक ले जाने वाली प्रणालियों की बढ़ती संख्या से चिंतित होकर महाशक्तियों (यू. एस. ए. तथा यू. एस. एस. आर.) के मध्य विभिन्न विषयों पर वार्ताएँ हुई और कई संधियाँ हुई, सन् १६६७ में आकाश में परमाणु बमों की तैनाती को निषिद्ध करते हुए आउटर स्पेस ट्रीटी की गई। १६७० में न्यूक्लीयर नान प्रालीफरेशन ट्रीटी पर हस्ताक्षर हुए, जिसके तहत परमाणु शक्ति सम्पन्न देशों द्वारा परमाणु अस्त्रों के प्रसार को रोकने के लिए अन्य देशों को यह प्रविधि देने पर प्रतिबन्ध था। १६७१ में सी - बैड ट्रीटी द्वारा समुद्र तल पर परमाणु आयुधों की तैनाती निषिद्ध कर दी गई। १६७४ में थ्रैसहाल्ड टेस्ट बैन ट्रीटी द्वारा परीक्षणों की अधिकतम शक्ति १५० किलो टन निर्धारित कर दी गई और बाद में कंप्रैहैंसिव टेस्ट बैन ट्रीटी द्वारा परमाणु परीक्षणों पर पूर्णतः रोक लगा दी गई। १६८७ में मिसाइल व राकेट प्रविधि के प्रविधि के प्रसार को रोकने के लिए ०७ देशों ने मिसाइल टेक्नोलॉजी कंट्रोल रेजीम पर हस्ताक्षर किए। १६६३ में हस्ताक्षरकर्ताओं की संख्या २२ तक पहुँच गई।

महाशक्तियों ने आयुधों में कटौती हेतु कई वार्ताएं की और रूस और अमेरिका के मध्य १६७२ में एंटी बैलिस्टक मिसाइल ट्रीटी (ABM) की गई। जिसके तहत कोई भी देश अपने यहाँ राजधानी क्षेत्र तथा एक आई. सी. वी. एम. स्थल को छोड़कर कहीं भी मिसाइल रक्षा प्रणाली तैनात नहीं करेगा।

यू. एस. ए. तथा यू. एस. एस. आर. के मध्य स्ट्रेटेजिक आर्म्स लिमिटेशन टॉक (साल्ट - १) १६७२ में हस्ताक्षरित हुई जिसके तहत यू. एस. ए. का अस्त्र भंडार १०५४ आई. सी. बी. एम. और ७१० एस. एल. वी. एम. तक सीमित किया जाना था और यू. एस. एस. आर. के पास कुल १६१८ आई. सी. वी. एम. और ६५० एस. एल. वी. एम. रह जाने थे।

१६७६ साल्ट-२ संधि हुई जिसके तहत दोनों महाशक्तियों के संयुक्त अस्त्र भंडार २४०० मिसाइलों तक सीमित कर दिए। आकाश से छोड़ी जाने वाली मिसाइलों पर प्रतिबंध लगा दिया गया। सोवियत संघ द्वारा अफगानिस्तान पर आक्रमण के कारण अमेरिकी संसद ने इस संधि की पुष्टि नहीं की।

१६८७ में मध्यम दूरी तक मार करने वाले प्रक्षेपास्त्रों के परिसीमन के लिए आई. एन. एफ. ट्रीटी राष्ट्रपति रेगन और श्री गोर्वाचेव के मध्य हस्ताक्षरित हुई जिसके तहत ५०० से १५०० किमी. तक मार करने वाली स्थल से छोड़ी जाने वाली सभी मध्यम दूरी की मिसाइलों का समापन कर दिया गया। इस संधि की पुष्टि दोनों देशों की संसदों ने की।

१६६१ में स्ट्रेटेजिक आर्म्स रिडक्शन ट्रीटी पर हस्ताक्षर हुए जिसके तहत यू. एस. ए. और यू. एस. एस. आर. को तीन चरणों में अगले ०७ वर्षो में अपने आयुध भंडार सीमित करने थे ताकि सम्मिलित आयुध भंडार की सीमा १६०० स्ट्रैटेजिक मिसाइलों और ६००० वारहेड तक सीमित रह जाए। इसके आगे चलकर स्टार्ट-२ संधि १६६३ में हुई जिस पर राष्ट्रपति बुश तथा श्री गोर्वाचेव ने हस्ताक्षर किए। इसके तहत यह निश्चित किया गया कि वर्ष २००३ तक भारी कटौती करते हुए कुल संयुक्त शस्त्र भंडार ३५०० वारहेड तक सीमित कर दिए जाएंगे। भारी आई. सी. बी. एम. जैसे एस. एस. - १८ समाप्त कर दिए जाएंगे। मोवाइल आई. सी. वी. एम. ११०० से अधिक नहीं होंगे और उनमें एक-एक वारहेड ही होगा। एस. एल. वी. एम. द्वारा प्रक्षेपित वारहेड की कुल संख्या १७५० तक सीमित कर दी जाएगी। इस संधि में शर्त यह थी कि इसका परिपालन तभी प्रारंभ होगा, जब स्टार्ट - १ संधि की पुष्टि दोनों देशों की संसदें कर देंगी। स्टार्ट -१ की पुष्टि १६६४ के अन्त में हो चुकी है।

इन संधियों के वाद भी परमाणु क्षेत्र में नवीन शोध, मारक क्षमता का अधिक विकास और लक्ष्य पर अचूक प्रहार सुनिश्चित करने के लिए शोध और प्रयोग तथा परीक्षण लगातार जारी रहे। आज कुल मिसाइलों की संख्या भले कम हो, किन्तु उनकी मारक क्षमता और अमोघता अभूतपूर्व है। MTCR के तहत ३०० किमी. से अधिक मार करने वाली किसी भी मिसाइल या उसकी प्रविधि के निर्यात पर प्रतिवन्ध है किन्तु फिर भी स्थिति यह है कि १६६३ तक २३ देशों के पास मिसाइल निर्माण क्षमता थी अर्जेन्टाइना, ब्राजील, चीन, मिस्र, फ्रांस, भारत, ईरान,

ईराक, इजराइल इटली, जापान, उत्तर कोरिया, नार्वे, पाकिस्तान, रूस, द. अफ्रीका, स्वीडन, ताइवान, ब्रिटेन, यूक्रेन तथा संयुक्त राज्य अमेरिका।

बेलिस्टिक मिसाइलों का प्रसार लगातार जारी है। १९९५ में ही १२ Short Range १४ मध्यम दूरी की तथा ८ अन्तर्महाद्वीपीय प्रक्षेपास्त्रों के विकास के कार्यक्रम संसार के विभिन्न देशों में प्रारंभ किये गये।

इस विवरण से स्पष्ट है कि आज भी विश्व परमाणु बमों और प्रक्षेपास्त्रों की छाया में भयातुर जी रहा है, इसी सदी में १९१४ से १९१८ तक प्रथम विश्व युद्ध और १९३९ से १९४५ तक द्वितीय विश्व युद्ध जैसी भयानक घटनाएं इतिहास ने देखी हैं जिनमें करोड़ों लोंगो के प्राण गए। युद्ध की विभीषिका को देखकर और भविष्य की आशंकाओं से त्रस्त होकर महाभारत युद्ध का स्मरण अनायास ही आता है जो आज से ५१०३ वर्ष पूर्व कुरुक्षेत्र में लड़ा गया और १८ दिन की अल्प अवधि में पाण्डव पक्ष की ७ अक्षौहिणी और कौरव पक्ष की ११ अक्षौहिणी सेना का विनाश हो गया। एक अक्षौहिणी सेना में २१८७० रथ, २१८७० हाथी, ६५६१० घोड़े और १०९३५० पैदल सैनिक होते थे।

युद्ध के बाद पाण्डव पक्ष में केवल ०५ पाण्डव तथा कौरव पक्ष में केवल ०३ वीर कृपाचार्य, कृतवर्मा और अश्वत्थामा ही जीवित बचे थे। लोमश ऋषि द्वारा प्रदत्त अनुस्मृति विद्या के आधार पर युधिष्ठिर ने महाभारत में कहा था कि इस युद्ध में एक अरब छियासठ करोड़ बीस हजार सैनिक मारे गए हैं।

युधिष्ठिर उवाच -

शायुतानामयुतं सहस्राणि च विंशति ।
कोट्यः षष्ठिश्च षट्चैव ह्यस्मिन् राजन् मृधे हताः ।।०९।।
अलक्षितानां वीराणां सहस्राणि चतुर्दश ।
दशचान्यानि राजेन्द्र शतं षष्ठिश्च पंच च ।।१०।।

२६वाँ अध्याय श्राद्ध पर्व।

इस भयानक विनाश के बाद तत्कालीन सभ्यता और संस्कृति को गहरा झटका लगा। द्वापर युग समाप्त हो गया और कलियुग का आगमन हुआ। आज पाँच हजार से अधिक वर्ष बीतने पर भी हम सभ्यता के उस चरम शिखर को छू नहीं पाए हैं, केवल उस ओर बढ़ रहे हैं।

युद्ध की विभीषिका तो बहुत योद्धाओं, विचारकों और मनीषियों ने देखी है। युधिष्ठिर हों या अशोक, भीष्म हों या कृष्ण, वेद व्यास हों या चंदवरदायी, किन्तु दिव्यास्त्रों का प्रयोग, उनके द्वारा हुआ विनाश जिसने प्रत्यक्ष देखा है, जिसने उसमें भाग लिया है और जिसने उसकी परिणामजन्य पीड़ा को भोगा है, ऐसा पात्र अश्वत्थामा के अतिरिक्त और कौन हो सकता है। उसने नारायण - अस्त्र का प्रयोग

कर सबसे आयुध रखवा लिए, अग्नेयास्त्र के प्रयोग से दो अक्षौहिणी सेना जला डाली और ब्रह्मशिर अस्त्र से पाण्डवों का संहार करना चाहा किन्तु व्यास जी और नारद जी के कहने पर अस्त्र का प्रतिसंहरण करना चाहा और असफल होने पर उसे एक नवीन लक्ष्य की ओर मोड़ दिया जो कि उत्तरा का गर्भ था। इससे रूष्ट श्रीकृष्ण द्वारा उसे शापित किया गया कि तुम निर्जन भूतल पर लोगों की संगति से दूर घाव भरे शरीर को लिए हुए तीन हजार वर्ष तक घूमते रहोगे। इस प्रकार दिव्यास्त्र प्रयोग के परिणाम की वेदना अश्वत्थामा से अधिक कौन जान सकता है। प्रस्तुत कृति के नायकत्व के लिए इसीलिए उसका चयन अनायास हो गया।

अश्वत्थामा चिरंजीवी है ऐसा अध्यात्म रामायण में उल्लेख है। वह सात चिरंजीवियों में से एक है

अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमांश्च विभीषणः ।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ।।

महान वैज्ञानिक आइंस्टीन से किसी ने पूछा कि तृतीय विश्वयुद्ध कैसा होगा तो उन्होंने बड़ा दार्शनिक उत्तर दिया था। तृतीय विश्वयुद्ध कैसा होगा यह मै नहीं जानता किन्तु जब कभी चतुर्थ विश्वयुद्ध होगा तो मनुष्य पत्थरों व लकड़ी के बने अस्त्रों से लड़ेगा। William J. Koenig ने पुस्तक लिखी है "Weapons of Third World war". 1981 में Bison Books Ltd. 176, Old Bompton Road, London SW5 (England) के द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक के अध्ययन से यह निश्चित हो जाता है कि तृतीय विश्वयुद्ध मानव जाति के लिए के लिए ही नहीं बल्कि पृथ्वी पर संपूर्ण जीवन के लिए विनाशकारी होगा। परमाणु युद्ध के प्रभावों का आकलन करने के लिए अनेक अध्ययन बड़े ही प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों द्वारा किये गये हैं इनमें १९८३ में R. P. TURCO, OB TOON T.P. ACKERMAN, J. B. POLLACK तथा CARL SAGAN जैसे महान वैज्ञानिकों द्वारा किया गया महत्वाकांक्षी तथा विस्तृत अध्ययन जिसे इन्हीं वैज्ञानिकों के नामों से प्राप्त संक्षिप्त शब्द T. T. A.P.S. द्वारा जाना जाता है अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसमें यह निष्कर्ष निकाला गया है कि परमाणु विस्फोटों से लगी विश्वव्यापी आग से उठा धूआँ आकाश में छाने से तथा रेडियोधर्मी धूल के कारण सूर्य का प्रकाश पृथ्वी तक बहुत कम पहुँचेगा इससे पृथ्वी का तापमान ११ से २२ डिग्री सें. तक कम हो जायेगा। अंधेरा छाने से, तापमान कम होने से तथा रेडियेशन बढ़ने से वनस्पतियाँ समाप्त हो जायेंगी तब ओजोन परत समाप्त होने के कारण सूर्य की अल्ट्रावाइलेट किरणों से, बढ़ते हुए रेडियेशन से जो कि फाल आउट के कारण होगा, गिरते तापमान के कारण और भोजन की कमी तथा चिकित्सा सुविधाओं के अभाव के कारण अधिकाँश मानव तथा प्राणी पृथ्वी से समाप्त हो जायेंगे इसे इन

वैज्ञानिकों ने न्यूक्लियर विन्टर का नाम दिया। मनुष्य के हिंसात्मक क्रूर और स्वार्थी स्वभाव को देखते हुए विश्व इतिहास की प्रवृत्ति देखते हुए और यह देखते हुए कि इतनी विनाशक शक्ति मनुष्य के हाथ में कभी नहीं थी और इन अध्ययनों के आधार पर मैंने कल्पना की है कि तृतीय विश्व युद्ध हुआ और पृथ्वी से जीवन समाप्त हो गया, अश्वत्थामा चिरंजीवी होने के कारण जीवित रहता है और निर्जीव धरा पर अकेला शोकमग्न विचरण करता है, श्रीकृष्ण आकर उसे उद्‌बोधित करते हैं और उसे महेन्द्र पर्वत पर जाकर परशुराम का आशीर्वाद लेने को प्रेरित करते हैं जहाँ सातों चिरंजीवी एकत्र हो विचार-विमर्श करते हैं कि भावी सर्जन में मनुष्य का आचरण कैसा हो, अंत में विश्व की मंगल कामना के साथ ग्रंथ का समापन होता है।

यह कथा अठारह सर्गों में हिन्दी व संस्कृत के विविध प्रकार के मात्रिक और वार्णिक ४२ प्रकार के छंदों में निबद्ध लगभग १४६७ पद्यों में वर्णित है।

मेरा पहला ग्रन्थ 'राधेय' जो कर्ण के जीवन चरित्र पर आधारित था, महाकाव्य १४ सर्गात्मक के रूप में १६६५ में प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत ग्रन्थ महाभारत पर आधारित और परंपरागत शैली में लिखा महाकाव्य है। ग्रंथ का बीज १६६६ में पड़ा चुका था, जब मैं केन्द्रीय कृषि मंत्रालय, दिल्ली में उप सचिव के रूप में कार्यरत था। वर्ष के अंत तक ७० प्रतिशत ग्रंथ पूर्ण हो चुका था। किन्तु पहले जबलपुर और बाद में कानपुर स्थानान्तरण होने से लेखन कार्य बाधित हो गया। अगस्त २००१ से पुनः लेखन प्रारंभ हुआ और ग्रंथ लगभग अपने वर्तमान रूप में मार्च २००२ तक आ गया था।

कर्ण यदि लोकापवाद के भय से अपरिचित रखे जाने के कारण सारा जीवन अभिशप्त की भाँति जीता है, तो अश्वत्थामा मिथ्या लोकापवाद के कारण अति दीर्घकालीन अभिशाप ढोता है। मैंने उसका चरित्र-चित्रण पात्र के आदि सर्जनाकार महाभारतकार व्यास जी के अनुसार करने का प्रयास किया है। व्यास जी उसके बारे में क्या कहते हैं, यह आगे वर्णित है। पाठकों को आश्चर्य होगा कि महाभारतेतर संस्कृत साहित्य के ग्रन्थों में हिन्दी साहित्य के ग्रन्थों तथा अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य में, जहाँ तक मेरा ज्ञान है, लेखकों और कवियों के अश्वत्थामा विषयक वर्णन मूल महाभारत से कई स्थानों पर बहुत अधिक हटे हैं। मुझे लगता है कि जनश्रुति ने साहित्यकारों को अधिक प्रभावित किया है और इसी कारण सोते हुए द्रौपदी पुत्रों के वध का लांछन तथा उत्तरा के गर्भ पर जान बूझ कर दिव्यास्त्र प्रक्षेप का पाप अश्वत्थामा के ऊपर लादकर उसे अनन्त काल तक पीड़ादायी शाप का भाजन बनाकर चित्रित किया गया है। इन भ्राँतियों के निराकरण का यथासंभव प्रयास मैंने किया है क्योंकि व्यास वर्णित चरित्र ही सर्वथा प्रामाणिक है।

मैं अश्वत्थामा के सम्मान के पुनर्स्थापन का उद्योग नहीं कर रहा, और न

उसके द्वारा की गई हिंसा या अनीति का समर्थन या न्यूनीकरण कर रहा हूँ किन्तु मेरा विनम्र मत है कि साहित्यकार को चरित्र-चित्रण में अतिरंजना से बचना चाहिए और कल्पना का उपयोग आदर्श के पोषण के लिए करना चाहिए, यथार्थ के सशक्तीकरण के लिए करना चाहिए न कि किसी चरित्र को विकृत और वीभत्स बनाने में।

अश्वत्थामा विषयक लोकापवाद का निराकरण अगले अध्यायों के वर्णन से हो जाता है। किन परिस्थितियों में उसने रात्रि में शिविर पर आक्रमण किया, किन विवशताओं में उसने दिव्यास्त्र को उत्तरा के गर्भ की ओर मोड़ा और श्री कृष्ण का शाप निरवधि न होकर कितने समय का था, यह इस ग्रन्थ में स्पष्ट किया गया है।

आज जब पश्चिम में लगातार आधुनिकतम वैज्ञानिक उपकरणों और संसाधनों तथा उत्कृष्ट प्रतिभा का उपयोग यह जानने में किया जा रहा है कि मानव सभ्यता का मूल क्या था, अनेक ऐतिहासिक-प्रागैतिहासिक, प्राणि वैज्ञानिक, जीवाश्म वैज्ञानिक, पुरातत्व वैज्ञानिक प्रमाणों से विभिन्न जनश्रुतियों, प्राचीन महाकाव्यों के उल्लेखों तथा बाइबिल इत्यादि धार्मिक ग्रन्थों में वर्णित घटनाओं और स्थानों की सत्यता को सिद्ध करने का प्रयास किया जा रहा है भारत में इससे उल्टी धारा बह रही है। यहाँ हर तथाकथित बुद्धिजीवी जो पश्चिमी विचारधारा से प्रभावित है, वह भारतीय संस्कृति के सम्बन्ध में इतिहास को झुठलाने में लगा है। कोई अयोध्या को गांधार देश में सिद्ध करने का प्रयास करता है, कोई लंका को मध्य प्रदेश के दण्डकारण्य में ढूँढ़ता है, कोई रामायण में वर्णित पात्रों और घटनाओं को काल्पनिक कह रहा है तो अन्य महाभारत जैसे इतिहास को मिथक कह रहा है। ये लोग वास्तव में उपनिवेशवादियों के हाथों के खिलौने हैं जो अपने ही ग्रन्थों को मूलरूप में पढ़ने और समझने में समर्थ नहीं है।

अंग्रेजी अनुवाद तक ही जिनकी पहुँच है, उनके निर्णय कितने तत्वसंगत होंगे यह कोई भी समझ सकता है। भारतीय गणना के अनुसार महाभारत युद्ध द्वापर के अन्त में और कलियुग के आगमन बिन्दु पर ५१०३ वर्ष पूर्व हुआ था। आज कलियुग को प्रारंभ हुए ५१०३ वर्ष बीत चुके है। इतने ही समय पूर्व महाभारत युद्ध हुआ था। द्वारका आज भी है, कुरुक्षेत्र आज भी है, हस्तिनापुर और मथुरा आज भी है, सिंधु, गांधार, कामरूप, आज भी हैं। जब स्थान उपलब्ध हैं तो व्यक्ति काल्पनिक कैसे हो सकते हैं। कुछ व्यक्तियों का मत है कि महाभारत एक परिवार की सीमित लड़ाई थी, जिसे कवि ने विश्वयुद्ध के रूप में चित्रित किया है। ऐसा नहीं है, यह लड़ाई इतनी बड़ी थी कि इसमें उस समय का ज्ञान-विज्ञान, सभ्यता और संस्कृति मिटी नहीं तो उसमें आश्चर्यजनक गिरावट अवश्य आई।

महाभारत काल के द्रोणाचार्य जैसे ऋषि, नरऋषि के अवतार, अर्जुन जैसे योद्धा, रुद्र के अंश से उत्पन्न और कृपी तथा द्रोण जैसे अयोनिज दम्पत्ति की संतान

अश्वत्थामा जैसा महापुरुष यदि दिव्यास्त्रों का प्रयोग कर सकते हैं और अश्वत्थामा जैसे ब्राह्मण युवक क्रोध में आकर उसका दुरुपयोग कर सकते हैं तो वर्तमान युग का मनुष्य जो लोभ, अहंकार, ईर्ष्या, और क्रूरता का दास है, उसके हाथ में परमाणु हथियार कितने सुरक्षित हैं, यह अनुमान का विषय नहीं है।

मेरा मानना है कि यदि अश्वत्थामा की कथा गहनता से पढ़ी जाए तो मनुष्य को नर संहार के आयुधों और उनके दुष्परिणामों से विरक्ति सी हो जाएगी।

अश्वत्थामा का भयानक अभिशप्त लम्बा जीवन, जिसमें वह शरीर पर घाव लिए हुए पृथ्वी पर एकाकी तीन हजार वर्ष तक भ्रमण करता है, किसी भी सहृदय को युद्ध से विमुख करने के लिए पर्याप्त होना चाहिए।

जीवन कितना अमूल्य है, सभ्यता और संस्कृति के विकास में कितना समय लगता है, विध्वंस क्षणिक उन्माद होते हुए भी कितने दूरगामी दुष्परिणाम डालता है, यह रेखांकित करने का उद्यम इस ग्रन्थ में किया गया है।

अश्वत्थामा का पूर्ण जीवन चरित्र स्वयं महाभारत में उपलब्ध नहीं है। मैंने भी उसके जीवन से सम्बन्धित कुछ प्रसंगों को ही छुआ है। रचना में इसी कारण न घटना सातत्य है और न काल की अन्विति। अपमान सर्ग के बाद तुरंत द्रोण वध की सूचना मिलती है, इस प्रकार द्रुपद मानापहार से लेकर महाभारत के युद्ध के प्रारम्भ तक की घटनाएं वर्णित नहीं हैं। विषाद सर्ग भी महाभारत काल के बाद से लगभग पाँच हजार दो सौ वर्ष बाद की घटना है। यह मेरी व्यक्तिगत कल्पना है, जिसे अश्वत्थामा की चिरंजीविता के आधार पर, वर्तमान अणु भंडारों के आधार पर एवं मनुष्य की अविवेकपूर्ण प्रतिक्रियाओं के आधार पर कल्पित किया गया है। इस काव्य के अंतिम ०६ सर्ग 'प्रायश्चित', 'विषाद', 'उद्बोधन', 'स्मृति', 'अन्वेषण' तथा 'निर्णय' कल्पना प्रसूत है। हाँ, स्मृति सर्ग अवश्य ही भौगोलिक, ऐतिहासिक और पौराणिक तथ्यों को समाविष्ट करता है।

अश्वत्थामा साधारण व्यक्ति नहीं है, वह परम विद्वान, आत्माभिमानी, महान योद्धा, महान शस्त्रज्ञ, दिव्यायुधवान और पिताप्रेमी तथा कृतज्ञ राजसेवक था। महाभारत में उसकी कोटि के वीर केवल द्रोण, भीष्म, अर्जुन और कर्ण ही हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता के प्रथम अध्याय में दुर्योधन, आचार्य द्रोण के पास जाकर पाण्डव सेना तथा अपनी सेना के प्रधान वीरों का वर्णन करता है -

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम।
नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते ।।७।।

भवान्भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिंजयः।

अश्वत्थामा विकर्णश्च सोमदत्तिस्तथैव च । ।८। ।
अन्ये च बहवः शूराः मदर्थे त्यक्तजीविताः ।
नानास्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः । ।९। ।

अपनी सेना के विशिष्ट वीरों तथा नायकों का वर्णन करते हुए वह केवल द्रोण, भीष्म, कर्ण कृप, अश्वत्थामा तथा भूरिश्रवा का ही उल्लेख करता है।

गीता के प्रारम्भ में कौरव वाहिनी रूपी रणनदी का वर्णन किया गया है, उसमें भी दुर्धर्ष योद्धा अश्वत्थामा का उल्लेख करते हुए कहा है वह रणनदी में घोर मगर के समान है -

अश्वत्थामा विकर्ण घोर मकरा दुर्योधनावर्तिनी ।
सोत्तीर्णा खलु पाण्डवै रणनदी कैवर्तकः केशवः । ।

महाभारत में उसे लोमश तथा परशुराम आदि ऋषियों के समकक्ष बताया गया है-

रामो व्यासस्तथा द्रौणिरश्वत्थामा च लोमशः ।
इत्येते मुनयो दिव्या एकैकः सप्त सप्तधा । ।

व्यास जी ने उसे रुद्र के अंश से उत्पन्न बताया है -

द्रोणं बृहस्पतेर्भागं विद्धि द्रौणिं च रुद्रजम् ।
भीष्मं च विद्धि गांगेयं वसुं मानुषतां गतम् । ।१६। ।
आश्रमवासिक पर्व ३१वाँ अध्याय

ऐसा व्यक्ति भी क्रोध और प्रतिहिंसा के वशीभूत होकर कितना उग्र और क्रूर-कर्मा हो सकता है, यह महाभारत कार ने हमें बताया । जबकि अर्जुन तक जानते है कि वह हृदय से बड़ा सौम्य और सब भूतों पर दया करने वाला है-

सौहार्दसर्वभूतेषु यःकरोत्यतिमानुषः ।
सोऽद्यकेश ग्रहं श्रुत्वा पितुर्धक्ष्यति नो रणे । । **- १८६ अध्याय द्रोण पर्व**

मेरे लिए सबसे कठिन कार्य था अंतिम सर्ग का लेखन जिसमें सभी चिरंजीवी अपने विचार व्यक्त करते हैं। मुझे 'कूर्मपुराण'तथा श्री राजेन्द्र मिश्र अभिराज रचित महाकाव्य 'वामनावतरणम्' से बलि से बारे में 'रामचरितमानस' से तथा श्री सोहन लाल रामरंग रचित महाकाव्य उत्तर साकेत' से विभीषण के विषय में, श्री रामचन्द्र शर्मा द्वारा लिखित 'परशुराम' उपन्यास तथा कविवर श्री श्याम नारायण पाण्डेय

रचित परशुराम महाकाव्य से परशुराम के विषय में रामचरित मानस, रामायण तथा गीता प्रेस द्वारा प्रकाशित कल्याण के हनुमान अंक से श्री हनुमान जी के बारे में ज्ञान प्राप्त हुआ। उसी आधार पर अंतिम सर्ग में अपनी क्षुद्र बुद्धि के अनुसार सात चिरंजीवियों के विचार लिख सका हूँ।

मई १९९३ से मई १९९७ के बीच कृषि मंत्रालय में उप सचिव के रूप में कार्य करते हुए मुझे हिन्दी साहित्य के भीष्म पितामह डॉ. नगेन्द्र का सानिध्य प्राप्त हुआ था। वे उस समय मंत्रालय के हिंदी सलाहकार थे। इस रचना के कई सर्ग मैनें पढ़कर उन्हें सुनाए थे, वे लेखन की प्रगति के बारे में पूछते रहते थे। रचना का नामकरण उन्होंने ही किया। मैं तीन नामों पर विचार कर रहा था, अंतिम सेनानी, चिरंजीवी और अश्वत्थामा। उन्होंने नायक के आधार पर ही नामकरण करने का सुझाव दिया।

काव्यप्रकाशकार आचार्य मम्मट काव्य का उद्देश्य बताते हुए कहते हैः-

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतर क्षतये।
सद्यः परिनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेयुजे।।

इस काव्य का मुख्य प्रयोजन शिवेतर क्षति ही है। अश्वत्थामा के वृतान्त से मनुष्य जाति को युद्ध के भयावह परिणामों के प्रति सचेत करना मूल प्रयोजन है ताकि मनुष्य जाति अपना और इस पृथ्वी के समूचे जीवन का विनाश न कर बैठे। लोकमंगल जैसे उदात्त शब्द का प्रयोग नहीं करूँगा क्योंकि इस कार्य में केवल सन्त महापुरुष या अवतार ही सक्षम होते हैं। फिर भी मेरी मान्यता है कि शब्द में बड़ी शक्ति है। हमारा दर्शन तो कहता है कि शब्द से ही सृष्टि की उत्पत्ति हुयी और शब्द का सबसे प्रभावोत्पादक प्रयोग काव्य के माध्यम से होता है, जब रमणीयता और संप्रेषणीयता उसकी शक्ति के सहायक बन जाते हैं।

नवीन शब्दावली के प्रयोग में मेरी रूचि है। ग्रंथ की भाषा में तत्समता प्रयास साध्य नहीं है, संस्कृत का विद्यार्थी होने से वह स्वतः आ गई है। भारती की अथाह शब्दनिधि काल के गर्भ में उपेक्षित क्यों पड़ी रहे। मेरी मान्यता है, कोई दो शब्द समानार्थी नहीं है प्रत्येक शब्द एक विशेष अर्थ से गर्भित होता है और उसका सत्प्रयोग काव्य को रमणीय और अर्थ गौरवयुक्त बनाता है। मुझे महाकवि माघ की उक्ति याद आती है।

शब्दार्थौ सत्कविरिव द्वयं विद्वानपेक्षते।

महाकवि श्रीहर्ष की भाँति 'ग्रंथ ग्रंथिरिह क्वचित् क्वचिदपि न्यासि प्रयत्नान्मया' काव्य को कठिन बनाने का युग अब नहीं रहा क्योंकि एक तो श्रीहर्ष जैसे महाकवि अब नहीं हैं उनका अनुकरण तो दूर अनुसरण तक नहीं किया जा सकता और न

करने की आवश्यकता है क्योंकि वैसे ही काव्य में जनरुचि कम हुयी है । विद्वान पाठक भी व्यस्त हैं समयाभाव है। हाँ श्लेप, यमक, मुद्रा, समासोक्ति, निरुक्ति, परिसंख्या और विरोधाभास जैसे अलंकारों का प्रयोग यत्र-तत्र करना अवश्य ही सुधी पाठकों को हृदयावर्जक होता है।

छन्दोवद्धता और छन्द की विविधता में मेरी अभिरुचि है इस दृष्टि से मुझे भारवि, माघ, केशव, गुप्त जी, प्रसाद और दिनकर जी के ग्रंथ विशेषप्रिय रहे हैं।

आदर्श और यथार्थ के बीच जो द्वन्द्व कल्पित किया गया है वह भी अवास्तविक है। यथार्थवादियों का आग्रह कि वर्णन यथातथ्य हो मान्य हो सकता है किन्तु जब विरूपता और वीभत्सता का साकार वर्णन होने लगता है तो संस्कृति का सौन्दर्यवोध खो जाता है, कलात्मकता जाती रहती है। कवि कोई एक्सरे मशीन नहीं है जो मात्र कंकाल दिखाये उसे चित्रकार होना पड़ता हो ताकि वह सत्य को रमणीय रूप में प्रस्तुत कर सके। वार-वार कुरूपता का चित्रण जनमानस की संवेदनशीलता को कम कर देता है। आज हम समाचार पत्रों में निरीह लोगों की आतंकवादियों द्वारा की गयी हत्या से उतने उद्वेलित नहीं होते क्योंकि ऐसी घटनाएं नित्य हो रही हैं। चिकित्सक आहत व्यक्ति को देखकर द्रवित नहीं होता क्योंकि वह नित्य उन्हें देखता है। हमारी कला की मान्यता थी सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम्। सत्य वह है जो त्रिकालावध्य हो, शिवम सर्वदा, सर्वथा और सर्वजन के लिए कल्याणकारी हो और सुन्दरम् वही है जिसमे सत्य, शिव के साथ रमणीयता उदारता और भव्यता का संगम हो रोग का वर्णन नहीं करना है उसकी औषधि भी बतानी है। स्वास्थ्य क्या है यह भी प्रस्तुत करना है। केवल प्रश्न ही नहीं उठाने हैं उनका सामाधान भी प्रस्तुत करना है। व्यक्ति क्या था, आज क्या है केवल यहीं पर लेखनी नहीं रुकनी चाहिए, व्यक्ति को क्या होना चाहिए जब तक यह न बताया गया तब तक लेखक का दायित्व पूर्ण नहीं होता। अतः मेरा विनम्र मत है कि यथार्थ और आदर्श दोनों ही काव्य में आवश्यक हैं।

इस रचना के किसी शब्द, पंक्ति, उक्ति या पद्य से यदि पाठक को रस की अनुभूति हो तो अश्वत्थामा एक काव्य है क्योंकि वाक्यम् रसात्मकं काव्यं कहकर आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य दर्पण में काव्य को परिभाषित किया है। मै स्वयं को कृतार्थ मानूँगा यदि पाठक को इस कृति के अध्ययन से रसानुभूति होती है।

प्रवंधकाव्य सदैव ही विरल लिखे गये हैं यही इस वात का प्रमाण है कि इनका लेखन प्रकीर्ण काव्य की अपेक्षा कठिन है। स्वयं महाकवि माघ ने शिशुपाल वध में कहा है :-

वह्वपि स्वेच्छया कामं प्रकीर्णमभिधीयते।
अनुज्झितार्थसम्वधः प्रवंधो दुरुदाहरः ।। - सर्ग 2, श्लोक 73

विद्वानों का मत है कि काव्य के लिए प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास तीन साधन हैं। मुझे आश्चर्य है कि मैंने किस प्रकार गधेय तथा अश्वत्थामा प्रबंधकाव्य लिखलिए क्योंकि मुझमें इन तीनों साधनों का अभाव है। मेरा विश्वास है कि मैं केवल ईश्वर की कृपा से ही काव्य लिखने में सफल हुआ हूँ।

मैं उन सभी लेखकों और कवियों का आभारी हूँ, जिनकी रचनाओं को मैंने पढ़ा है और प्रेरणा ग्रहण की है। मैं अपने पिता श्री भगवान दयाल मिश्र का आभारी हूँ, जिन्होंने काव्य रचना के मेरे उद्यम में शिथिलता देखने पर मुझे सावधान किया और प्रेरणा दी। मैं अपने गुरू श्री आर. के. सराफ तथा डा. रतन चन्द्र जैन का आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे संस्कृत भाषा पढ़ाई, मै ऋणी हूँ अपनी जननी श्रीमती राम सहेली मिश्रा का जिनके पावन व्यक्तित्व का कुछ प्रभाव मुझ पर भी पड़ा। अर्धांगिनी श्रीमती रत्नेश का भी आभारी हूँ जिन्होंने मेरी व्यस्तता तथा अध्ययन व लेखन के कारण हो रही उपेक्षा को सहजता से लिया और पूर्ण सहयोग देते हुए मुझे घर - गृहस्थी की समस्याओं में नहीं उलझने दिया। इस ग्रन्थ के टंकण में मुझे श्री नारायण सिंह 'मृदुल' तथा सुशील शर्मा ने वहुत योगदान दिया। मैं उन्हें हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

ग्रन्थ की प्रूफ रीडिंग में श्री नारायण सिंह तथा श्री विजयकर मिश्र राजभाषा अनुभाग ने वहुत परिश्रम किया, मैं उनका आभारी हूँ।

डॉ. वालशौरि रेड्डी, डॉ. मोहन अवस्थी, डॉ. ओउम प्रकाश अवस्थी, डॉ. रमेश शर्मा को वार-वार नमन करता हूँ जिन्होंने इस ग्रन्थ को अपना आशीर्वाद दिया।

श्री सुधीर तिवारी ने इसके प्रकाशन में अनुपम रुचि ली है, उनका आभार व्यक्त करता हूँ।

यह कृति जो भगवान शिव के प्रसाद से प्रसूत है, माता शारदा को द्वितीय प्रसून के रूप में अर्पित कर रहा हूँ। ईश्वर से प्रार्थना है कि यह सहृदयों को मोद प्रदान करने वाली हो ।

स्थान : कानपुर

- शिव कुमार मिश्र

दिनांक : ०५.०६.२००३

अश्वत्थामा का व्यक्तित्व : महाभारतकार के अनुसार

अश्वत्थामा की उत्पत्ति की कथा महाभारत के आदि पर्व के संभव पर्व के १३०वें अध्याय में वर्णित है। अंगिरा गोत्र में उत्पन्न भरद्वाज ऋषि के पुत्र द्रोणाचार्य और शरद्वान ऋषि से उत्पन्न कृपी दोनों दिव्य प्राणी थे, वे अयोनिज थे। तपस्यारत द्रोण ने पितरों की आज्ञा से सन्तान प्राप्ति हेतु कृपी से विवाह किया, वे बड़ी धर्मज्ञ, सुशील और तपस्विनी थीं -

शारद्वतीं ततो भार्यां कृपीं द्रोणोऽन्वविन्दत् ।
अग्निहोत्रे च धर्मे च दमे च सततं रताम् ।। ४६ ।।

इन दिव्य दम्पत्ति से अश्वत्थामा का जन्म हुआ, जिसने उत्पन्न होते ही उच्चैःश्रवा के समान घोर शब्द किया जो दिशाओं और व्योम में व्याप्त हो गया, तब आकाशवाणी हुई कि इस विशिष्ट बालक का नाम अश्वत्थामा होगा -

अलभत गौतमी पुत्रमश्वत्थामानमेव च ।
स जात मात्रो व्यनदद् यथैवोच्चैःश्रवा हयः ।। ४७ ।।

तच्छ्रुत्वान्तर्हितं भूतमन्तरिक्षस्थमब्रवीत् ।
अश्वस्येवास्य यत् स्थाम नदतः प्रदिशो गतम् ।। ४८ ।।

अश्वत्थामैव बाल्योऽयं तस्मान्नाम्ना भविष्यति ।
सुतेन तेन सुप्रीतो भरद्वाजस्ततोऽभवत् ।। ४६ ।।

पुत्र के जन्म पर द्रोण को महान प्रसन्नता हुई और उन्होंने योग्य विप्रों को सहस्रों गायें व धन दान में दिया। इससे स्पष्ट है कि उस समय द्रोण के पास धन का अभाव नहीं था। इसका प्रमाण है कि अर्जुन की यह उक्ति द्रोणपर्व नारायणास्त्र पर्व १६६वाँ अध्याय -

यस्मिंजाते ददौ द्रोणो सगवां दशशतं धनम् ।
ब्राह्मणेभ्यो महार्हेभ्यः सोश्वत्थामैष गर्जति ।।

किन्तु कुछ समय बाद ही द्रोण परशुराम जी से विद्या प्राप्त करने गये। घर की आर्थिक स्थिति गिरती गयी और विपन्नता आ गयी। द्रोण आश्रम से लौटे तो घर में गाय तक न थी। अन्य ऋषि कुमारों को दूध पीते देख अश्वत्थामा दूध के हेतु रोता था

और एक दिन द्रोण ने देखा कि ऋषि कुमार चावल के आटे का घोल बनाकर अश्वत्थामा को पिला चुके हैं और अबोध बालक - मैंने दूध पी लिया - यह कहते हुए आनन्दित हो रहा है। यह देख द्रोण स्वयं को धिक्कार उठे - संभव पर्व, १३०वाँ अध्याय -

गो क्षीरं पिबतो दृष्ट्वा धनिनस्तत्र पुत्रकान् ।
अश्वत्थामारुदद् बालस्तन्मे संदेहयत् दिशः ।। ५१ ।।

पिष्टोदकं सुतो यस्य पीत्वा क्षीरस्य तृष्णया ।
नृत्यति स्म मुदाविष्टः क्षीरं पीतं मयाप्युत् ।। ५७ ।।

बालक के लिए गाय की व्यवस्था हेतु द्रोण स्थान-स्थान पर घूमे, पर धर्मयुक्त दान नहीं मिला और वे अपने बाल-सखा द्रुपद के पास जाने को उद्यत हुए -

विशुद्धमिच्छन् गांगेय धर्मोपेतं परिग्रहम् ।
अन्ता दन्तं परिक्रम्य नाध्य गच्छं पयस्विनीम् ।। ५३ ।।

द्रुपद की राजसभा में पिता की अवमानना बालक अश्वत्थामा ने देखी थी और देखी होगी उनकी विवशता और क्रूर विडम्बना कि शस्त्र-शास्त्र शिरोमणि भी सत्तासीन मदमत्त व्यक्ति द्वारा अपमानित होते हैं। अश्वत्थामा को लेकर द्रोण पाञ्चाल राज्य से कुरु राज्य में हस्तिनापुर आ गये और उसका युवावस्था तक का जीवन हस्तिनापुर में बीता। महाभारत में उल्लेख है कि द्रोण के कुरु कुमारों के आचार्य बनने से पूर्व कृप उन्हें शिक्षा देते थे और अश्वत्थामा भी कुरु कुमारों को बाण विद्या सिखाते थे -

स नागपुरमागम्य गौतमस्य निवेसने ।
भारद्वाजोऽवसत् तत्र प्रच्छन्न द्विजसत्तम् ।। १४ ।।

ततोऽस्य तनुजः पार्थान् कृपस्यानन्तरं प्रभुः ।
अस्त्राणि शिक्षयामास नावुध्यन्त च तं जनाः ।। १५ ।।

द्रोण फिर कौरवों के आचार्य हुए और अपने प्रिय शिष्यों को महारथी बनाकर द्रुपद को पराजित करा दिया और वन्दी बनाकर जब उसे लाया गया तो उसका आधा राज्य लौटाकर उन्होंने उदारता का परिचय दिया - आदि पर्व/संभव पर्व १३७वाँ अध्याय

प्रार्थयेयं त्वया सख्यं पुनरेवं जनाधिप ।
वरं ददामि ते राजन् राज्यस्यार्द्धमवाप्नुहि ।। ६८ ।।

अराजा किल नो राज्ञः सखा भवितुमर्हसि ।
अतः प्रयतितं राज्ये यज्ञसेन मया तव ।। ६९ ।।

राजासि दक्षिणे कूले भागीरथ्याहमुत्तरे ।
सखायं मां विजानीहि पान्चाल यदि मन्यसे ।। ७० ।।

अहिच्छत्रं च विषयं द्रोणः समभिपद्यत ।। ७६ ।।

उत्तर पाञ्चाल का आधा राज्य लेकर द्रोण ने अश्वत्थामा को दे दिया, इसकी राजधानी अहिच्छत्र थी।

अब द्रोण भारत भर के सबसे श्रेष्ठ आचार्य थे। कुरु राज्य में उन्हें भीष्म, धृतराष्ट्र, विदुर आदि से पूर्ण सम्मान प्राप्त था, अतः अभावों के दिन विदा हो गये थे। पिता संसार के सबसे श्रेष्ठ धनुर्वेद ज्ञाता हों और पुत्र कुशाग्र बुद्धि और बलवान हो तो शिक्षा की न्यूनता कैसे रह सकती है। अश्वत्थामा को भी द्रोण ने धनुर्वेद के सारे रहस्य बता दिये। सारे दिव्यास्त्र, आग्नेय, वरुणास्त्र, पर्जन्यास्त्र, वायव्यास्त्र, ब्रह्मास्त्र, नारायणास्त्र, ब्रह्मशिर आदि इसे सिद्ध हो गये और द्रोण, भीष्म, परशुराम की कोटि का धनुर्धर वह बन गया। कृप, अर्जुन व कर्ण भी उसे अधिक श्रेष्ठ नहीं थे।

अर्जुन उसकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं - भीष्म पर्व ७३वाँ अध्याय

स हि नित्यमनीकेषु युध्यतेऽयमास्थितः ।
अस्त्रग्रामं ससंहारं द्रोणात् प्राप्य सुदुर्लभम् ।।१४।।

नारायणास्त्र का प्रयोग तो द्रोण के अतिरिक्त और किसी को ज्ञात नहीं। इसी का प्रयोग अश्वत्थामा अपने पिता की मृत्यु पर क्रुद्ध हो पाण्डव पक्ष पर करता है।

अश्वत्थामा के ब्रह्मतेज, वीरता, धैर्य, तितिक्षा, शस्त्रज्ञान, नीतिज्ञान, बुद्धिमत्ता के विषय में किसी को संदेह नहीं है। महाभारत काल के सभी प्रमुख व्यक्ति अश्वत्थामा के बल, बुद्धि व शील के प्रशंसक हैं।

भीष्म जी रथियों व अतिरथियों की गणना करते हुए राजा दुर्योधन से अश्वत्थामा के बारे में कहते हैं - उद्योगपर्व १६७वाँ अध्याय -

द्रोणपुत्रो महेष्वासः सर्वानेवातिधन्विनः ।
समरे चित्रयोधी च दृढ़ास्त्रश्च महारथः ।। ३ ।।

वे आगे कहते हैं -

नैष शक्यो माया वीरः संख्यातुं रथ सत्तम् ।
निर्दहेदपि लोकांस्त्रीनिच्छन्नेष महारथः ।। ५ ।।

महामनस्वी भीष्म घोषणा करते हैं कि महाभारत के युद्ध को पूर्णता और परिणति को यही वीर पहुँचाएगा और उनका यह कथन सत्य निकला -

असंख्येय गुणो वीरः प्रहर्ता दारुण द्युतिः ।
दण्डपाणि रिवा सह्यः कालवत् प्रचरिष्यति ।। १० ।।

युगान्तराग्नि समः क्रोधात् सिंहग्रीवो महाद्युतिः ।
एप भारत युद्धस्य पृष्ठं संशमयिष्यति ।। ११ ।।

किन्तु उसी अवसर पर भीष्म जी उसके दोप बताते हुए कहते हैं कि इस ब्राह्मण को अपना जीवन बहुत प्रिय है -

दोषस्त्वस्य महानेको यैनेव भरतर्पभ ।
न मे रथो नातिरथो मतः पार्थिव सत्तम् ।। ७ ।।

जीवितं प्रियमत्यर्थमायुष्कामः सदाद्विजः ।
नह्यस्य सदृशः कश्चिदुभयोः सेनयोरपि ।। ८ ।।

किन्तु इस शंका को सर्वथा निर्मूल द्रौणि ने कर दिया है। उनके जैसा निर्भीक योद्धा कौरव पक्ष में और कोई नहीं है। जब राक्षसों की सेना ने घटोत्कच के नेतृत्व में भयानक आक्रमण किया तो सभी कौरव वीर पराङ्मुख हो गये और अकेले अश्वत्थामा वहां अड़े रहे। घटोत्कच पुत्र अंजनपर्वा को मार डाला, एक अक्षौहिणी सेना को मार डाला और घटोत्कच को आहत कर दिया - घटोत्कच वध पर्व १५६वाँ अध्याय ।

तदुग्रमति रौद्रं च द्रष्ट्वा युद्धं नराधिपाः ।
तनयास्तव कर्णश्च व्यथिता प्राद्रवन् दिशः ।। ७१ ।।

तत्रैकोऽस्त्र बलश्लाघी द्रौणिर्मानी न विव्यथे ।
व्यधमच्च शरैर्मायां घटोत्कच विनिर्मिताम् ।।

तमस्मय वर्माणं द्रौणिर्भीमात्मजात्मजम् ।
जघानान्जनपर्वाणं महेश्वर इवान्धकम् ।।

तत्राद्भुतमिमं द्रौणिर्दर्शयामास विक्रमम् ।
अशक्यं कर्तुमन्येन सर्वभूतेषु भारत ।।

निमेषान्तर मात्रेण साश्वसूतरथद्विपाम् ।
अक्षौहिणीं राक्षसानां शिर्तैर्बाणैरशातयत् ।।

मुझे तो प्रतीत होता है कि भीष्म जी ने कर्ण की तरह ही अश्वत्थामा का अवमूल्यन सोद्देश्य किया है ताकि ऐसे दुर्धर्ष वीर को दुर्योधन सेनापति न बना दे और पाण्डव अरक्षित हो जायें।

अश्वत्थामा कौरव सेना का प्रधान महारथी है। कुरुराज ने अपने पक्ष की ग्यारह अक्षौहिणी सेना को ग्यारह महारथियों के सेनापतित्व में संगठित किया था। ये थे - द्रोण, कृप, शल्य, जयद्रथ, सुदक्षिण, कृतवर्मा, अश्वत्थामा, कर्ण, भूरिश्रवा, शकुनि

और बाह्लीक। अतः अश्वत्थामा ग्यारह सेनापतियों में एक प्रमुख स्थान रखता है।

वह अप्रतिम योद्धा और शूरवीर है। युद्ध में अर्जुन, कृष्ण, युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव, द्रुपद, धृष्टद्युम्न तथा घटोत्कच लड़ रहे थे। उनके रहते हुए भी उनके देखते-देखते अश्वत्थामा ने द्रुपद सुत सुरथ और शत्रुंजय, कुन्तिभोज को १० पुत्रों तथा बलानीक, शतानीक, जयाश्व, श्रुताह्य, हेममाली, पृषध्र तथा चन्द्रसेन जैसे वीरों को रण में मार डाला और युधिष्ठिर की सेना भाग चली -

मिषतो भीम सेनस्य हैडिम्बे पार्षतस्य च।
यमयोधर्मपुत्रस्य विजयस्याच्युतस्य च।।

स नाराचगणै पार्थान द्रौणिर्विद्ध्वा महावलः।
जघान सुरथं नाम द्रुपदस्य सुतं विभुः।।

पुनः शत्रुजयं नाम द्रुपदस्यात्मजं रणे।
बलानीकं जयानीकं जयाश्वं चाभिजघ्निवान्।।

श्रुताह्वयं च राजानं द्रौणिर्निन्ये यमक्षयम्।
त्रिभिश्चान्यैः शरैस्तीण्क्षैः सुपुखैर्हेममालिनम्।।

जघान च पृपध्रं च चन्द्रसेन च मारिष।
कुन्तिभोज सुतांश्चासौ दसभिर्द्श जघ्निवान्।।

ततो पराङ्मुख नृपं सैन्यं यौधिष्ठिरं नृप।
पराजित्य रणे वीरो द्रोणपुत्रो ननाद ह।।

वह आशुकोपी है किन्तु शीघ्र ही शान्त हो जाता है। उसे किसी से कोई विद्वेष नहीं है। कृपाचार्य का अपमान करने वाले कर्ण पर वह कुपित होता है उसे मारने दौड़ता है -

तथा परुषितं दृष्ट्वा सूत पुत्रेण मातुलम्।
खड्गमुद्यम्यवेगेन द्रौणिरभ्यपतद् द्रुतम्।।

किन्तु कृप तथा दुर्योधन द्वारा बीच-बचाव कर उसे शान्त किया जाता है।

उसी कर्ण के प्रति उसे कोई द्वेष नहीं जब पाञ्चाल सेना को कर्ण नष्ट कर रहा था तो अपने दल की रक्षा के लिए अर्जुन उस ओर बढ़ते हैं तो दुर्योधन कर्ण की रक्षा के लिए अपने महारथियों को जाने के लिए कहता है तो अश्वत्थामा तुरन्त दौड़ पड़ते हैं -

ततो द्रौणिः कृपः शल्यो हार्दिक्यश्च महारथः।
प्रत्युद्ययुस्तदेनं पार्थं सूत - पुत्र परीप्सया।।

दुर्योधन को अश्वत्थामा की क्षमताओं में बड़ा विश्वास है -

कोहि शस्त्रविदां मुख्यो महेश्वर समोयुधि ।
शत्रुं न क्षपयेच्छक्तो यो न स्याद् गौतमी सुतः ।।

शक्तो ह्यसि महाबाहो दिव्येनं स्वेन तेजसा ।
निग्रहे पाण्डुपुत्राणां पाञ्चालानां च मानद ।।

द्रोणपर्व में घटोत्कच वध पर्व में पान्चालों को पराजित करने वाले द्रोणपुत्र के पराक्रम और निर्भीकता का वर्णन है। वह कैकेय सेनाओं तथा पाञ्चालों को एक साथ ही अपने ऊपर प्रहार करने को उकसाता है -

ततोऽब्रवीत् सकैकेयान् पाञ्चालान् गौतमी सुतः ।
प्रहरध्वमितः सर्वे मम गात्रे महारथाः ।।

उनके प्रहारों से अविचल द्रौणि जब अपने प्रहार करते हैं तो पाञ्चाल, सोमक तथा कैकेय पलायन कर जाते हैं -

ते हन्यमानाः समरे पाञ्चालाः सोमकस्तथा ।
परित्यज्य रणे द्रौणिं व्यद्रवन्त दिशो दश ।।

वहाँ सभी के द्वारा उसके पूजित होने का वर्णन है -

सम्पूज्यमानो युधि कौरवैयैर्निर्जित्य संख्येऽरिगणान् शहस्त्रशः ।
व्यरोचत द्रोणसुतः प्रतापवान् यथा सुरेन्द्रोऽरिगणान् वै ।।

धृटराष्ट्र भी उसे परम वीर मानते हैं। वे अश्वत्थामा को शस्त्र ज्ञान में राम के समान, युद्ध में इन्द्र के समान, विक्रम व शक्ति में कार्तवीर्य के समान और बुद्धि में बृहस्पति के समान बताते हैं -

रामस्य तु समः शस्त्रे पुरंदर समोयुधि ।
कार्तवीर्य समो वीर्ये बृहस्पति समो मतौ ।।

महीधर सम स्थैर्ये तेजसाऽग्नि समो युवा ।
समुद्र इव गांभीर्ये क्रोधे चाशीविषोपमः ।।

स रथी प्रथमो लोके दृढ़धन्वा जितक्लमः ।
शीघ्रोऽनिल इवाक्रन्दे चरन् क्रुद्धइवान्तकः ।।

अश्वत्थामा अत्यन्त स्पष्टवादी है, वह निःशंक होकर अपनी बात कहता है। उसे कर्ण तो क्या स्वयं दुर्योधन तक पर अपना क्रोध प्रकट करते संकोच नहीं होता,

दुर्योधन द्रोणाचार्य को उपालंभ देता है कि आप पाण्डुपुत्रों पर प्रीति रखते हैं और इसलिए पूरी शक्ति से युद्ध नहीं कर रहे। इस आक्षेप पर अश्वत्थामा क्रुद्ध होकर जो प्रत्युत्तर देता है वह द्रष्टव्य है -

प्रिया हि पाण्डवा नित्यं मम चापि पितुश्च मे ।
तदैवावां प्रियौ तेपां न तु युद्धे कुरूद्वह ।।

हमको और पिता को पाण्डव प्रिय है और पाण्डव हम दोनों पर प्रीति रखते हैं किन्तु युद्धस्थल की वात अलग है यहाँ तो हम प्राणपण से तुम्हारे हित में लड़ रहे हैं। यदि मैं, आचार्य, कर्ण, शल्य, कृप और कृतवर्मा न हों तो तुम्हारी सेना को पाण्डव आधे क्षण में ही नष्ट कर डालें।

ते चापि कौरवीं सेनां निमेषार्धान् कुरूद्वह ।
क्षपयेयुर्महावाहो न स्याम यदि संयुगे ।।

तुम जो हम पर शंका कर रहे हो तो यह तुम्हारा पापपूर्ण चरित्र ही अभिव्यक्त हो रहा है। तुम लोभी, मानी, शंकालु और कुत्सित हो -

त्वं तु लुव्धतमो राजन् निकृतिज्ञश्च कौरव ।
सर्वाभिशंकी मानी च ततोऽस्मानभिशंकसे ।।

मन्ये त्वां कुत्सितो राजन् पापात्मा पाप पूरुपः ।
अन्यानपि स नः क्षुद्र शंकसे पाप भावितः ।।

जव सात्यकि को द्रौणि घायल कर देते हैं तो उनका सारथि उसे रण से हटाकर दूर ले जाता है तो धृष्टद्युम्न आगे बढ़ते हैं। अश्वत्थामा से युद्ध होता है। अश्वत्थामा उसे भौंहों के बीच वाण मारकर मूर्छित कर देते हैं, तव भीम, अर्जुन, मालवराज, सुदर्शन, पौरव, वृद्धक्षत्र तथा चेदि देश का युवराज धृष्टद्युम्न की रक्षा हेतु आगे बढ़ते हैं और एक साथ द्रोणपुत्र पर आक्रमण करते हैं किन्तु परिणाम वड़ा अप्रत्याशित है, सवसे एकाकी युद्ध करता हुआ अश्वत्थामा सुदर्शन, वृद्धक्षत्र और चेदि युवराज तीनों को क्रमशः मार गिराता है।

मालवेश सुदर्शन का वध -

आसन्नस्य स्वरथं तीव्र तेजा सुदर्शनस्येन्द्र केतु प्रकाशौ ।
भुजौ शिरश्चेन्द्र समान वीर्य स्त्रिभिः शरैर्युगपद् संचकर्त ।।

पौरव वृद्धक्षत्र का वध -

स पौरवं रथशक्तया निहत्य छित्वा रथं तिलशश्चास्य वाणैः ।
छित्वा च वाहू वरचन्दनाक्तौ भल्लेन कायाच्छिर उच्चकर्त ।।

चेदि युवा का वध -

युवानमिन्दीवरदाम-वर्ण चेदिप्रभुं युवराजं प्रसह्य ।
वाणैस्त्वरावान् प्रज्वलिताग्नि कल्पैर्विध्वा प्रादान्मृत्यवे साश्वसूतम् ।।

इन तीनों वीरों के मरने पर भीम को वड़ा क्रोध आया। उनका फिर द्रोणपुत्र से भयंकर युद्ध हुआ किन्तु अन्त में सारथी मारे जाने पर घायल भीम को अनियंत्रित घोड़े रथ को दूर ले गये -

ततोऽश्वाः प्राद्रवंस्तूर्ण मोहिते रथ सारथौ ।
भीमसेनस्य राजेन्द्र पश्यतां सर्वधन्विनाम् ।।

और तव एक वार फिर पाण्डव सेना भाग चली -

ततः सर्वे च पाञ्चाला भीमसेनस्य पाण्डवाः ।
धृष्टद्युम्न रथं त्यक्त्वा भीताः सम्प्राद्रवन् दिशः ।।

अर्जुन जैसे महावीर भी मानते हैं कि सौम्य अश्वत्थामा का सभी प्राणियों में सौहार्द्र का भाव रहता है। यद्यपि उसमें अतिमानवीय शक्तियाँ हैं। क्रुद्ध हो जाने पर उससे रक्षा संभव नहीं। वे जानते हैं कि द्रोण के शिरच्छेद से क्रुद्ध अश्वत्थामा से अब धृष्टद्युम्न की रक्षा असंभव है। द्रोणपर्व का १९६वाँ अध्याय -

सौहार्द्रं सर्वभूतेषु यः करोत्यति मानुषः ।
सोऽद्य केशग्रहं श्रुत्वा पितुर्धक्ष्यति नो रणे ।।

सर्वे वयं परित्रातुं न शक्ष्यामोऽद्य पार्षतम् ।।

क्योंकि वे समझते हैं कि अश्वत्थामा में इन्द्र के समान शक्ति है, उसका कोप भी यम के समान है -

इन्द्र विष्णु समंवीर्ये कोपेऽन्तकमिवस्थितम् ।
बृहस्पति समंवुद्धया नीतिमतं महारथम् ।।

अर्जुन तक को हतप्रभ कर देने की क्षमता कौरव पक्ष में यदि किसी वीर में है तो वे हैं भीष्म, द्रोण, कर्ण और अश्वत्थामा। संशप्तक युद्ध के अवसर पर अश्वत्थामा अर्जुन को ललकारता है। दोनों में युद्ध छिड़ जाता है, किन्तु वाणों की अजस्त्र वर्षा करते हुए कृष्ण व अर्जुन दोनों को ढक कर निश्चेष्ट कर देता है -

ततः शरशतैस्तीक्ष्णैरश्वत्थामा प्रतापवान् ।
निश्चेष्टौ तावुभौ युद्धे चक्रे माधव पाण्डवौ ।।

उसके विक्रम को देख श्रीकृष्ण तक को क्रोध आ जाता है, वे अर्जुन की भर्त्सना

करने लगते हैं और उसे सावधान करते हैं -

हीयमाने च कौन्तेये कृष्णे रोषः समाविशत् ।
ततः क्रुद्धोऽब्रवीत् कृष्णः पार्थं सप्रणयं तदा ।।

अत्यद्भुतमिदं पार्थ तव पश्यामि संयुगे ।
अतिशेते हि यत्र त्वां द्रोणपुत्रोऽद्य भारत ।।

कच्चितवीर्यं यथापूर्वं भुजयोर्वा बलं तव ।
कच्चित्ते गाण्डिवं हस्ते रथतिष्ठसि चार्जुन ।।

अश्वत्थामा के विचार अद्भुत हैं। अब शत्रु तक को वह सम्मान देते हैं। किसी के प्रति उन्हें विद्वेष नहीं है। वे घटोत्कच से कहते हैं कि मुझे तुम्हारे प्रति कोई रोष नहीं है। किन्तु रोष आने पर व्यक्ति स्वयं तक को नष्ट कर सकता है, अन्यों की तो बात ही क्या -

कामं खलु न रोषो मे हैडिम्बे विद्यते त्वयि ।
किन्तु रोषान्वितो जन्तुर्हन्यादात्मानमप्युत ।।

पिता के प्रति उसका अपरिमित आदर और प्रेम है। उसके रहते पिता का जो अपमान हुआ, उससे वह अपना जीवन व्यर्थ समझता है -

मयिजीवति यत् तातः केश ग्रहणमवाप्तवान् ।
कथमन्ये करिष्यन्ति पुत्रेभ्यः पुत्रिणः स्पृहाम् ।।

धिङ् ममास्त्राणि दिव्यानि धिक् बाहू धिक् पराक्रमम् ।
यं स्म द्रोणः सुतं प्राप्य केश ग्रहमवाप्तवान् ।।

उसका मानना था कि आर्य को कभी भी आत्मप्रशंसा नहीं करनी चाहिए -

आर्येण हि न वक्तव्या कदाचित् स्तुतिरात्मनः ।।

अश्वत्थामा के अनुसार जिनने अस्त्र डाल दिये हों आत्म-समर्पण कर दिया वे शत्रु विजित ही हैं, वे मृत के समान ही हैं -

पराजयो वा मृत्युर्वा श्रेयान् मृत्युर्न निर्जयः ।
विजितारयो ह्येते शस्त्रोपसर्गान्मृतोपमाः ।।

अश्वत्थामा बहुत गुणग्राही और निष्पक्ष है। जिस कर्ण को वह मातुल अपमान से क्रुद्ध हो मारने दौड़ा था, द्रोण वध के उपरान्त जब अगले सेनानायक का चयन करने के लिए विमर्श चल रहा था तो उसने कर्ण की प्रशंसा करते हुए यह भार कर्ण को सौंपने का परामर्श दुर्योधन को दिया।

उसकी अपनी कोई महत्वाकांक्षा नहीं है। कर्ण की मृत्यु के बाद पुनः सेनापतित्व का प्रश्न उपस्थित होता है। दुःखी चिन्तित दुर्योधन सलाह के लिए केवल अश्वत्थामा की ही शरण जाते हैं, क्योंकि अश्वत्थामा गुणग्राही, नीतिज्ञ, राजा का हितैषी, निःस्वार्थ, कर्तव्यपरायण और स्पष्टवादी है -

यं पुरस्कृत्य सहिता युधिजेष्याम पाण्डवान् ।
गुरुपुत्रोऽद्य सर्वेषांमस्माकं परमा गतिः ।।

भवांस्तस्यान्नियोगान्ते कोऽस्तु सेनापतिर्मम ।।

अश्वत्थामा अविलम्ब इस समस्या का समाधान कर देते हैं कि अगला सेनापति शल्य को बनाइए -

अयं कुलेन रूपेण तेजसा यशसा श्रिया ।
सर्वगुणैः समुदितः शल्योनोऽस्तु चमूपतिः ।।

भागिनेयान् निजांस्त्यक्त्वा कृतज्ञोऽस्मानुपागतः ।
महासेनो महाबाहुर्महासेन इवापरः ।।

पिता की वीरगति का वृत्तान्त सुनकर अश्वत्थामा को मर्मान्तक पीड़ा होती है। उससे भी अधिक पीड़ा और आक्रोश होता है, जिस प्रकार छल से उन्हें मारा गया और भीषण उत्ताप तो उसे इस घटना से है जो ध्यामग्न पिता के केश पकड़कर धृष्टद्युम्न ने उनका शीश काटा। युद्ध में मृत्यु उसे उतना दुःख नहीं दे रही है जितना शत्रुकृत अपमान -

न्यायवृत्तो वधोयस्तु संग्रामे युद्धतो भवेत ।
स न दुःखाय भवति तथा दृष्टो हि स द्विजैः ।।

यत् तु धर्मप्रवृत्तः सन् केश- ग्रहमवाप्तवान् ।
पश्यतां सर्वसेनान्यां तन्मे मर्माणि कृन्तति ।।

इसी अमर्ष में वह भीषण प्रतिज्ञा करता है कि - मैं सर्व पाञ्चालों का वध कर दूँगा और यह किए बिना जीवित नहीं रहूँगा -

शपे सत्येन कौरव्य इष्टापूर्तेन चैव ह ।
अहत्वा सर्वपाञ्चालान् जीवेयं न, कथंचन् ।।

धृष्टद्युम्नं च समरे हन्ताहं पापकारिणम् ।
कर्मणायेन तैनेह मृदुना दारुणेन च ।।

वह नारायणस्त्र का प्रयोग करने का संकल्प करता है -

सोऽहं नारायणास्त्रेण महता शत्रुतापनः ।
शत्रून् विध्वंसयिष्यामि कदर्थीकृत्य पाण्डवान् ।।

नारायणास्त्र का ज्ञान द्रोणपुत्र के अतिरिक्त किसी योद्धा को नहीं था। अश्वत्थामा इस बात को जानता था -

न हि जानाति बीभत्सुस्तदस्त्रं न जनार्दनः ।
न भीमसेनो न यमौ न च राजा युधिष्ठिरः ।।

नारायणास्त्र के प्रयोग से सब नष्ट हो जाते किन्तु श्रीकृष्ण ने उपाय बता दिया। सभी शस्त्र त्याग दो, वाहनों से उतर कर नतशीश हो इसकी शरण में चले जाओ, सारे पाण्डव पक्ष ने यही किया; समर्पण से ही वे बच सके और इस प्रकार उस दिन अश्वत्थामा की पूरी विजय हुई ।

अश्वत्थामा कृष्ण का वास्तविक स्वरूप नहीं जानता अतः जब आग्नेयास्त्र से अर्जुन व श्रीकृष्ण को कोई क्षति नहीं होती तो उसे बड़ा क्रोध आता है वह अपना धनुष फेंक देता है और विद्या पर संदेह करने लगता है तब व्यास जी उसे श्रीकृष्ण तथा अर्जुन दोनों का रहस्य बताते हैं - द्रोण पर्व २०१वाँ अध्याय - अश्वत्थामा का प्रश्न -

सर्वघातिमया मुक्तमस्त्रं परम् दारुणम् ।
केनेमौ मर्त्यधर्माणौ नावधीत् केशवार्जुनौ ।।

तब व्यास जी समझाते हैं -

योऽसौ नारायणो नाम पूर्वेषामपि पूर्वजः ।
आदि देवो जगन्नाथो लोक कर्ता स्वयं प्रभुः ।।
अतोऽजेयः सर्वभूतैर्मनसापि जगत्पतिः ।

वही नारायण जो शिव जी से वरदान प्राप्त हैं, माया से जगत को मोहित करते हुए पृथ्वी पर विचरण कृष्ण के रूप में कर रहे हैं और अर्जुन पूर्व जन्म में नर ऋषि थे-

तस्यैव तपसा जातं नरो नाम महामुनिम् ।
तुल्य मेतेन देवेन तं जानीह्यर्जुनं सदा ।।

नर और नारायण दोनों शिव जी की आराधना करते थे और हे द्रौणि! तुम भी पूर्व में महान शिव भक्त थे और शिव जी ने प्रसन्न होकर तुम्हें भी वरदान दिये थे।

तथैव कर्मणा कृत्स्नं महतस्तपसोऽपि च ।
तेजो मन्युं विभ्रत्वं जातो रौद्रो महामते ।।

स तथा पूज्यमांस्ते पूर्व देहे ऽप्यतूतुपत् ।
पुष्कलांश्च वरां प्रादात् तव विद्वन् हृदिस्थितम् ।।

परिचय जानकर द्रौणि का क्षोभ दूर होता है वह शिवजी व केशव को प्रणाम करता है।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा द्रोणपुत्रो महारथः ।
नमश्चकार रुद्राय बहुमेने च केशवम् ।।

अश्वत्थामा सहृदय और भावुक व्यक्ति है। अपने राजा दुर्योधन को असहाय घायल पड़े हुए सरोवर के किनारे पड़ा देख उसके अश्रु बहने लगते हैं -

ततो द्रौणिर्महाराज वाष्पपूर्णेक्षणः श्वसन् ।

वह कहता है आपको इस अवस्था में देखकर मुझे जितनी पीड़ा हो रही है, उतना संताप पिता के वध से भी नहीं हुआ था -

पिता मे निहतः क्षुद्रैः सुनृशंसेन कर्मणा ।
न तथा तेन तापामि यथा राजंस्त्वयाद्य वै ।।

तब वह प्रतिशोध लेने की भीषण प्रतिज्ञा करता है -

अद्याहं सर्व पाञ्चालान् वासुदेवस्य पश्यतः ।
सर्वोपायैर्हि नेष्यामि प्रेतराज निवेशनम् ।।

उस समय घायल मुमूर्ष दुर्योधन उसका अपने अन्तिम सेनानी के रूप में अभिषेक करते हैं और कहते हैं -

ममाज्ञया द्विजश्रेष्ठ द्रोणपुत्रोऽभिषिच्यताम्।
सेनापत्येन भद्रं ते ममचेदिच्छसि प्रियम् ।।

क्योंकि ब्राह्मण को भी राष्ट्रहित में युद्ध करना धर्म है -

राज्ञो नियोगाद् योद्धव्यं ब्राह्मणेन विशेषतः ।
वर्तता क्षत्रधर्मेण ह्येवं धर्मविदो विदुः ।।

उलूक द्वारा रात्रि में कौवों पर आक्रमण कर उनके विनाश से द्रौणि को रात्रि में आक्रमण करने की प्रेरणा मिलती है - सौप्तिक पर्व प्रथम अध्याय -

संनिपत्य शाखायां न्यग्रोधस्य विहंगमः ।
सुप्तांजघान सुबहून् वायसान् वायसान्तकः ।।

तद्दृष्ट्वा सोपधं कर्म कौशिकेन कृतंनिशि ।
तद्भावे कृत संकल्पो द्रौणिरेकोऽन्वचिन्तयत् ।।

उपदेशः कृतोऽनेन पक्षिणा मम संयुगे ।
शत्रूणां क्षपणे युक्तः प्राप्तः कालश्च मे मतः ।।

सौप्तिक पर्व की वास्तविकता :

लोक में प्रचलित किंवदंती के अनुसार अश्वत्थामा ने सोते हुए द्रौपदी के पाँचों पुत्रों के शिर पाण्डव समझकर रात में काट लिये। यह प्रचार साहित्यकारों में भी हो गया और द्रौणि का कृत्य बड़े वीभत्स रूप में प्रस्तुत किया गया। वास्तविकता इससे भिन्न है।

सौप्तिक पर्व का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि शिविर पर रात में आक्रमण की योजना द्रौणि ने वनायी, कृप और कृतवर्मा को विवश हो उसका साथ देना पड़ा। वे दोनों शिविर द्वार पर खड़े हो गये, केवल अश्वत्थामा भीतर गया। अश्वत्थामा ने वहाँ धृष्टद्युम्न को सोते से चरण प्रहार करके जगाया और लात-घूंसों के प्रहारों से मार डाला। शोर सुनकर प्रहरी जाग गये, स्त्रियाँ चिल्लाने लगीं। योद्धा शस्त्र सज्जित होने लगे। इस बीच उत्तमौजा को भी द्रौणि ने मार डाला। किन्तु इसके वाद तो सभी जाग गये और चारो ओर से अश्वत्थामा पर प्रहार करने वीर जा पहुँचे, किन्तु उसने युद्ध करते हुए युधामन्यु, प्रतिविन्ध्य, सुतसोम, शतानीक, श्रुतकर्मा, श्रुतकीर्ति और शिखण्डी को मार डाला। योद्धा जव शिविर से भागने लगे तो कृप और कृतवर्मा ने तीन ओर से आग लगा दी और द्वार पर खड़े हो गये, भागते हुए योद्धाओं को यमलोक पहुँचाने लगे। इसके प्रमाण इस प्रकार हैं -

तस्य वीरस्य शव्देन मार्यमाणेन वेश्मनि ।
अवुध्यन्त महाराज स्त्रियों ये चास्य रक्षिणः ।।

तासां तु तेन शव्देन समीपे क्षत्रियर्षभा ।
क्षिप्रं च समनह्यन्त किमेतदितिव्रुवन् ।।

युधामन्युश्च सम्प्राप्तो मत्वातं रक्षसा हतम् ।
गदामुद्यम्य वेगेन हृदि द्रौणिमताडयत् ।।

इसी बीच सभी जाग गये, द्रौपदी के पुत्र सैनिकों सहित तथा शिखण्डी आकर द्रौणि पर बाण वर्षा करने लगे -

तेन शव्देन वित्रस्ता धनुर्हस्ता महारथाः ।
धृष्टद्युम्नं हतं श्रुत्वा द्रौपदेया विशांपते ।।

अवाकिरन्शरव्रातैर्भारद्वाजमभीतवत् ।
ततस्तेन निनादेन सम्प्रवुद्धाः प्रभद्रका ।
शिलीमुखैः शिखण्डी च द्रोणपुत्रं समार्दयन् ।।

यह देख अश्वत्थामा रथ से कूदकर तलवार व ढाल लेकर उनकी ओर दौड़ा था तथा तलवार के वार से प्रतिविन्ध्य को मार डाला। तलवार उसके पेट में मारी थी।

सुतसोम ने तव प्रास से द्रौणि को वेध दिया और फिर तलवार लेकर द्रौणि की ओर दौड़ा किन्तु सुतसोम की वाँह द्रौणि ने काट दी और फिर पार्श्व भाग में तलवार से वार किया और उसे मार डाला।

शतानीक ने रथ का पहिया द्रोणपुत्र की छाती पर दे मारा, किन्तु द्रोणपुत्र वह वार झेल गया। और फिर उसने शतानीक को भी तलवार से मार डाला और शिर काट डाला।

श्रुतकर्मा ने वेग से आकर परिघ का प्रहार द्रोणपुत्र की वायीं भुजा पर किया, किन्तु वार सहकर द्रौणि ने उसके चेहरे पर तलवार मारी, तो वह मर गया।

श्रुतकीर्ति वाण वर्षा करता हुआ वहाँ आया तो उसके वाणों को ढाल से वचाते हुए द्रौणि ने उसका तलवार से शिर काट लिया।

शिखण्डी वाणों से तथा नाना अस्त्रों से प्रहार करता है। उसके साथ सभी प्रभद्रकगण के वीर हैं। शिखण्डी का वाण द्रौणि के माथे पर लगता है, किन्तु वह क्रोध से आगे वढ़कर शिखंडी के दो टुकड़े तलवार से कर देता है।

इस घटना का वर्णन व्यास जी ने सौप्तिक पर्व में इस प्रकार किया है -

ततः स नरशार्दूल प्रतिविन्ध्यं महारथे ।
कुक्षिदेशेऽवधीद् राजन् स हतोन्यपतद् भुवि ।।

प्रासेन विध्वा द्रौणिं तु सुतसोम प्रतापवान् ।
पुनश्चासिं समुद्यम्य द्रोणपुत्रमुपाद्रवत् ।।

सुतसोमस्य सासिं च वाहुं छित्वा नरर्षभ ।
पुनरप्यहनत् पार्श्वे स भिन्नहृदयोऽपतत् ।।

नाकुलिस्तु शतानीको रथचक्रेण वीर्यवान् ।
दोर्भ्यामुक्षिप्य वेगेन वक्षस्येनमताडयत् ।।

अताडयच्छतानीकं मुक्तचक्रम् द्विजस्तु सः ।
स विह्वलो ययौ भूमिं ततोऽस्यापाहरच्छिरः ।।

श्रुतकर्मा तु परिघं गृहीत्वा समताडयत् ।
अभिद्रुत्य ययौ द्रौणिं सव्ये सफलकेभृशम् ।।

स तु तं श्रुतकर्माणमास्ये जघ्ने वरासिना ।
स हतो न्यपतद् भूमौ विमूढो विकृताननः ।।
तेन शब्देन वीरस्तु श्रुतकीर्तिर्महारथः ।
अश्वत्थामानमासाद्य शरवर्षैरवाकिरत् ।।
तस्यापि शरवर्षाणि चर्मणाप्रतिवार्य सः ।
सकुण्डलं शिरः कायाद् भ्राजमानमुपाहरत् ।।
ततोभीष्म निहन्ता तं सह सर्वेप्रभद्रकैः ।
अहनत् सर्वतो वीरं नाना प्रहरणैर्वली ।।
शिलीमुखेनान्येन भ्रुवोर्मध्ये समार्पयत् ।
स तु क्रोध समाविष्टो द्रोणपुत्रो महाबलः ।।
शिखण्डिनं समासाद्य द्विधाचिच्छेद सोऽसिना ।।

इसके पश्चात हम उस घटना को देखेंगे, जिसकी चर्चा परवर्ती साहित्य में बड़े एकपक्षीय ढंग से हुई है। वह है अश्वत्थामा का उत्तरा के गर्भ पर दिव्यास्त्र का प्रक्षेप।

पहले देखें महाभारतकार व्यास इस घटना का वर्णन कैसे करते हैं -

शिविर को तहस-नहस करके अश्वत्थामा पलायन कर जाता है, किन्तु क्रुद्ध भीम वेगवान रथ से उसका पीछा करते हैं जब भीम अश्वत्थामा का पीछा करते हुए जाते हैं तो श्रीकृष्ण अर्जुन व युधिष्टिर को सावधान करते हैं कि हमें अश्वत्थामा के स्वभाव को देखते हुए भीम को एकाकी और अरक्षित नहीं छोड़ना चाहिए।

वे उसके स्वभाव का वर्णन करते हुए कहते हैं कि वह चपल, क्रूर, दिव्यास्त्रवान किन्तु दुरात्मा है।

ब्रह्मशिर नामक अस्त्र का ज्ञान द्रोण ने प्रिय अर्जुन को दिया है यह जानकर अश्वत्थामा ने भी इसके लिए हठ किया तब द्रोण ने पुत्र हठ मानते हुए उसे अप्रसन्नतापूर्वक यह अस्त्र दिया और सावधान किया कि इसका प्रयोग महान विपत्ति में भी पड़कर नहीं करना चाहिए और मनुष्यों के विरुद्ध तो कभी नहीं। साथ ही कहा है पुत्र तुम सज्जनों के मार्ग पर दृढ़ नहीं रहोगे।

विदित चापलं ह्यासीदात्मजस्य दुरात्मनः ।
सर्वधर्म विदाचार्यः सोऽन्वशात् स्वसुतं ततः ।।
परमापद्गतेनापि न स्म तात त्वया रणे ।
इदमस्त्रं न प्रोयक्तव्यं मानुषेषु विशेषतः ।।
इत्युक्तवान गुरु पुत्रं द्रोणः पश्चाद्थोक्तवान् ।
न त्वं जातु सतां मार्गे स्थातेति पुरुषर्षभ ।।

और तो और कृष्ण कहते हैं कि एक बार अश्वत्थामा ने उनसे चक्र माँग लिया था ताकि वह संसार में अजेय हो सके। किन्तु वह चक्र उससे उठाया भी न जा सका।

कृष्ण उसके स्वरूप का वर्णन करते हुए कहते हैं -

स संरंभी दुरात्मा च चपलः क्रूर एव च ।
वेद चास्त्रं ब्रह्मशिरः तस्माद् रक्ष्यो वृकोदरः ।।

भीम अश्वत्थामा को व्यास जी के आश्रम में पा जाते हैं और उनमें उग्र वार्तालाप होता है। इसी बीच श्रीकृष्ण व अर्जुन भी आ जाते हैं। उन तीनों को देख अश्वत्थामा के हृदय में भय का संचार होता है। चूँकि उस समय वह मुनिवेश में है, शस्त्र, अस्त्र धारण नहीं किये है, अतः बचने केलिए वह ब्रह्मशिर नामक दिव्यास्त्र का आह्वान करता है। उधर श्रीकृष्ण की आज्ञा से अर्जुन भी ब्रह्मास्त्र इसके प्रतिकार में चला देते हैं। दोनों दिव्यास्त्र आकाश में टकराने चले जाते हैं तो व्यास व नारद मुनि प्रकट हो दोनों वीरों को आदेश देते हैं कि यह महाविनाशकारी कृत्य न करो। अपने-अपने अस्त्र लौटाओ।

अर्जुन ऋषि की आज्ञा से ब्रह्मास्त्र का प्रतिसंहरण करते हैं, किन्तु अश्वत्थामा प्रयास करने पर भी विफल रहता है। अपनी विवशता ऋषि को बताता है। वे उसकी निन्दा करते हैं। तब अश्वत्थामा कहता है कि पाण्डुपुत्रों की वध की कामना से उठाया गया यह अस्त्र किसी पाण्डव पर न गिरे, यह गर्भस्थ पाण्डुवंशी पर गिरे। व्यास कहते हैं कि अब इसी बुद्धि में स्थिर रहो ताकि दिव्यास्त्र गर्भ पर गिरकर ही शान्त हो जाये और इस प्रकार अपनी विवशता व ऋषि की सम्मति से वह प्रहार होता है, ताकि पाँचो पाण्डव बच जायें।

द्रौणिरप्यथ सम्प्रेक्ष्य तावृपी पुरतः स्थितौ ।
न शशाक पुनर्घोरमस्त्रं संहर्तुमोजसा ।।
अशक्तः प्रतिसंहारे परमास्त्रस्य संयुगे ।
द्रौणिर्दीनमना राजन् द्वैपायनमभाषत् ।।
उत्तम व्यसनार्तेन प्राणत्राणमभीप्सुना ।
मयैतदस्त्रमुत्सृष्टं भीमसेन भयान्मुने ।।
अतः सृष्टमिदं ब्रह्मन् मयास्त्रमकृतात्मना ।
तस्य भूयोऽद्यसंहारं कर्तुं नाहमिहोत्सहे ।।
कृतं पापमिदं ब्रह्मन् रोषाविष्टेन चेतसा ।
वधमाशास्य पार्थानां मयास्त्रं सृजता रणे ।।

तब भगवान व्यास उसे आदेश देते हैं कि तुम अपने शिर की मणि दे दो,

अस्त्र त्यागो, पाण्डव तुम्हें प्राणदान दे देंगे। वह कहता है भगवन् आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, यह रही मणि और यह रहा मैं। किन्तु दिव्यास्त्र कैसे रोकूँ, यह तो अमोघ है -

गर्भेषु पाण्डवेयानाममोघं चैतदुत्तमम् ।
न च शक्तोऽस्मि भगवन् संहर्तु पुनरुद्यतम् ।।

तब व्यास जी कहते हैं कि बस इसी निश्चय पर दृढ़ रहो, कुछ मत विचारना-

एवं कुरू न चान्या तु बुद्धि कार्यात्वियानघ ।
गर्भेषु पाण्डवेयानां विसृज्यैतदुपारम् ।।
ततः परमस्त्रं तु द्रौणिरुद्यतमाहवे ।
द्वैपायन वचः श्रुत्वा गर्भेषु प्रमुमोच ह ।।

ये हैं वे परिस्थितियाँ जिनमें दिव्यास्त्र गर्भ पर गिराया गया। यह जानबूझकर पाण्डववंश नाश की योजना से नहीं किया गया था, जैसा वर्णन परवर्ती साहित्य में हुआ है।

श्रीकृष्ण द्वारा शाप :

अश्वत्थामा के इस कृत्य पर भगवान श्रीकृष्ण को वहुत क्रोध आता है। वे उसकी निन्दा करते हैं, उसे कायर, पापी, बालघाती बताते हैं और शाप देते हैं कि तुम ३००० वर्षों तक भूतल पर निर्जन स्थानों में भटकते रहोगे, तुम्हारे शरीर से पीप तथा रक्त की गंध आती रहेगी, तुम्हें किसी का साथ नहीं मिलेगा -

तस्मात्वमस्य पापस्य कर्मणः फलमाप्नुहि ।
त्रीणि वर्ष सहस्राणि चरिष्यसि महीमिमाम् ।।
अप्राप्नुवन् क्वचित् कश्चित संविदं जातुकेनचित ।
निर्जनानसहायस्त्वं देशान् प्रविचरिष्यसि ।।
भवित्री न हि ते क्षुद्रजनमध्येषु संस्थितिः ।
पूयशोणित-गन्धी च दुर्गकान्तारसंश्रयः ।।

अभिशप्त अश्वत्थामा व्यास जी से कहता है जो भी भगवान पुरुषोत्तम ने कहा वह सत्य हो। हे भगवान मैं अब आपके अतिरिक्त किसी पुरुष के साथ नहीं रहूँगा। यह कहकर विषादयुक्त मन से अश्वत्थामा वन को चला गया -

सहैव भवता ब्रह्मन् स्थास्यामि पुरुषेष्विह ।
सत्य वागस्तु भगवानयं च पुरुषोत्तमः ।।

प्रदायाथ मणिं द्रौणि पाण्डवानां महात्मनाम् ।
जगामविमनास्तेषां सर्वेषां पश्यतां वनम् ।।

इस प्रकार हिंसा और अभिशाप में क्रोध और विषाद में इस महान विद्वान् और दुर्धर्ष वीर की कथा का समापन होता है।

युधिष्ठिर ने भगवान कृष्ण के सामने प्रश्न रखा था कि अकेले अश्वत्थामा ने इतना भयानक काण्ड कैसे कर दिया -

कथं नु कृष्ण पापेन क्षुद्रेणाकृत कर्मणा ।
द्रौणिना निहताः सर्वे मम पुत्रा महारथाः ।।
किन्नु तेन कृतं कर्म तथा युक्तं नरर्षभ ।
यदेकः समरे सर्वानवधीन्नो गुरोः सुतः ।।

कृष्ण कहते हैं कि यह कर्म द्रौणि ने शिवजी से प्राप्त शक्ति से किया -

न तन्मनसि कर्तव्यं न च तद् द्रौणिना कृतम् ।
महादेव प्रसादेन कुरु कार्यमनन्तरम् ।।
नूनं स देव देवानामीश्वरेश्वरमव्ययम् ।
जगाम शरणं द्रौणिरेकस्तेन वधीद् बहून् ।।

कृप, हार्दिक्य तथा द्रौणि तीनों ने महाविनाश कर यह संवाद दुर्योधन से कहा फिर राजा धृतराष्ट्र को बताया और कहा कि हम तीन हैं और पाण्डव पाँच हैं और कोई नहीं बचा।

फिर वे तीन दिशाओं में चले गये कृप हस्तिनापुर गये, कृतवर्मा द्वारिका तथा द्रौणि व्यास के साथ वन चले गये। **- स्त्रीपर्व ११वाँ अध्याय**

जगाम हास्तिनपुरं कृपः शारद्वतस्तदा ।
स्वमेव राष्ट्रं हार्दिक्यो द्रौणि व्यासाश्रमं ययौ ।।

महाभारतेतर संस्कृत साहित्य में अश्वत्थामा

१. संस्कृत साहित्य में महाकवि भास के नाटक चक्र में 'उरूभंगम्' का विशेष स्थान है। इसमें जहाँ दुर्योधन का चरित्र उदात्तता से चित्रित किया गया है, वहीं अश्वत्थामा को अहंकारी बताया गया है। उसमें सहृदयता तथा उदारता का अभाव बताया है। अपने पराक्रम का वह स्वयं बखान करता है -

छलबलदलितोरुः कौरवेन्द्रो न चाहं

शिथिल विफलास्त्रः सूतपुत्रो न चाहं ।

इह तु विजय भूमौ द्रष्टुम द्योयतास्त्रः

सरभसमहमेको द्रोणपुत्रः स्थितोऽस्मि ।।

- उरूभंगम् प्रथम अंक ५७वाँ छंद

भास ने इस नाटक में यहाँ तक कल्पना कर डाली है कि स्वयं दुर्योधन अश्वत्थामा को युद्ध से विरत होने की सलाह देता है और अश्वत्थामा उससे भला-बुरा कहते हुए यहाँ तक कह जाता है कि 'भीम ने संग्राम में गदा प्रहार करने के साथ ही तुम्हारे केशों को पकड़ा और तुम्हारी दोनों जंघाओं के साथ ही तुम्हारे गर्व का भी हरण कर लिया।'

अश्वत्थामा के अहंकार पराकाष्ठा होती है जब वह पाण्डवों के साथ श्रीकृष्ण को भी मार डालने की धमकी देता है। - **६०वाँ पद्य**

अश्वत्थामा को इस प्रकार क्रूर निर्दयी अहंकारी के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो रात्रि में अपनी राक्षसी वृत्ति का परिचय देता है।

२. इसके पश्चात् मेरी जानकारी में आठवीं शताब्दी के प्रारम्भ में लिखा गया भट्ट नारायण कृत प्रसिद्ध नाटक 'वेणी संहार' ही है, जिसमें अश्वत्थामा का उल्लेख आता है। अश्वत्थामा के ऊर्जस्वी शब्द चित्रों की प्रशंसा करनी होगी।

वेणी संहार तृतीय अंक में -

पिता की मृत्यु की सूचना से शोकमग्न अश्वत्थामा स्वयं भी आत्महत्या का विचार करता है -

मद्वियोगभयात्तातः परलोक मितो गतः ।

करोम्यविरहं तस्य वत्सलस्य सदा पितुः ।। ३/१७

वह शस्त्र त्याग का भी संकल्प करता है -

परित्यक्तं तेन त्वमित सुत शोकान्नतुभया ।
द्विमोक्ष्ये शस्त्रं त्वामहमपि यतः स्वस्ति भवते ।। ३/१६

वह दुरात्मा पाञ्चाल धृष्टद्युम्न के प्रति कहता है -

तातं शस्त्रग्रहण विमुखं निश्चयेनोपलभ्य ।
त्यक्त्वा शंकां खलु विदधतः पाणिमस्योत्तमाङ्गे ।
अश्वत्थामा करधृत धनुः पाण्डु पाञ्चाल सेना ।
तूलोत्क्षेप प्रलय पवनः किं न यातः स्मृतिं ते ।। ३/२३

क्रोध में वह विवेकहीन हो जाता है और पाण्डवों के साथ श्रीकृष्ण को भी मारने की धमकी देता है -

कृतमनुमतं दृष्टं वा यैरिदं गुरुपातकं ।
मनुज पशुभिर्निर्मर्या दैर्भवदिभरुदायुधैः ।
नरक रिपुणा सार्धं तेषां सभीमकिरीटिना ।
मयमहमसृङ्मेदा मां सैः करोमि दिशां बलिम् ।। ३/२४

कृप कहते हैं - सेनापति के पद पर अभिषेक करके आपको संग्राम भूमि में उतारना चाहता हूँ।

अश्वत्थामा का उत्तर है - मामा यह कार्य दूसरे के अर्थात् राजा दुर्योधन के अधीन है और कोई बड़ी चीज भी नहीं है - 'मातुल परतंत्र मिदम् किंचित्करं च।'

कृप - वत्स! न तो यह परतंत्र है और न साधारण चीज। देखो भीष्म व द्रोण के न रहने पर भीष्म व द्रोण की श्रेणी के व्यक्ति आप सेनापति के पद पर नहीं नियुक्त किये जाते तो वह दुर्योधन की सेना कैसी होगी, अर्थात् किस काम की होगी?

भवेदभीष्मद्रोणं धार्तराष्ट्रबलं कथम् ।
यदि तत्तुल्यकक्षोऽत्र भावान्धुरि न युज्यते ।। ३/२६

यह वर्णन महाभारत के अनुसार है -

मयि जीवति मत्तातः केशग्रहः मवाप्तवान् ।
कथमन्ये करिष्यन्ति पुत्रेभ्यः पुत्रिणः स्पृहाम् ।। ३/३१

वह पाञ्चालों के गर्भस्थ शिशुओं तक के विनाश की बात करता है -

यो यः पाञ्चालगोत्रे शिशुरधिक वया गर्भशय्यागता वा ।। ३/३२

कृपाचार्य दुर्योधन से प्रस्ताव करते हैं -

राजन् सुमहान्खलु द्रोणपुत्रेण वोढुमध्यवसितं
समरभारः अतोऽभिषिच्यतां सैनापत्ये ।
दुर्योधन - सुष्ठु युज्यमानमभिहितं युष्माभिः किन्तु
प्राक्प्रतिपन्नोऽयमर्थोऽङ्गराजस्य ।

कृप इसके उत्तर में कहते हैं कि अश्वत्थामा की उपेक्षा कर्ण के लिए करना ठीक नहीं है।

कर्ण की कटूक्ति भी समझ में नहीं आती, जहाँ वह कहता है -

निर्वीर्यं वा सवीर्य वा मया नोत्सृष्टमायुधम् ।
यथा पाञ्चाल भीतेन पित्रा ते बाहुशालिना ।। ३/३६

कर्ण से विवाद होने पर अश्वत्थामा क्रोधपूर्वक प्रतिज्ञा करता है कि जब तक कर्ण जीवित है, वह शस्त्र नहीं धारण करेंगे -

अयं पापो यावन्न निधनमुपेयादरि शरैः ।
परित्यक्तं तावत्प्रियमपि मयास्त्रं रणमुखे । ३/४५

इस पर कर्ण पुनः उसकी खिल्ली उड़ाता है कि शस्त्र त्याग तो तुम्हारे वंश की ही परम्परा मे प्राप्त है।

परन्तु दो बातें खटकने वाली हैं - प्रथम तो तृतीय अंक में यह वर्णन कि द्रोण-वध के उपरान्त कृपाचार्य व अश्वत्थामा दुर्योधन के पास जाते हैं और प्रस्ताव करते हैं कि अब सेनापति अश्वत्थामा को बनाया जाये, जिसे दुर्योधन यह कहते हुए अस्वीकार कर देता है कि यह पद पहले ही कर्ण को दे चुका हूँ।

महाभारत से यह प्रतिकूल वर्णन है। वहाँ दुर्योधन अश्वत्थामा से सलाह लेता है और वही कर्ण के सेनापतित्व का प्रस्ताव करते हैं।

तृतीय अंक में ही कर्ण व अश्वत्थामा का वाद-विवाद वर्णित है। कर्ण पिता वध से दुखी अश्वत्थामा से कटु बातें कहता है और द्रोण द्वारा मृत्यु से पूर्व शस्त्र त्याग पर आपत्तिजनक टिप्पणियाँ करता है। महाभारत में ऐसा कोई उल्लेख नहीं हैं और न महाभारत में यह उल्लेख है कि अश्वत्थामा क्रुद्ध होकर शपथ लेता है कि कर्ण की मृत्यु तक वह शस्त्र नहीं उठाएगा। यह भी भट्ट नारायण की कवि कल्पना ही है।

कर्ण के साथ अश्वत्थामा का विवाद मूल महाभारत के द्रोण पर्व में घटोत्कच वध पर्व के १५६वें अध्याय में उस स्थल पर है, जब कर्ण कृपाचार्य का अनादर करता है।

अश्वत्थामा द्वारा शस्त्र त्याग की बात तो दूर रही उल्टे जब दुर्योधन कहता है कि पाञ्चाल सेना से जूझ रहे कर्ण को मारने अर्जुन बढ़ आ रहे हैं, उनकी रक्षा करो तो अश्वत्थामा, कृपाचार्य, मामा शल्य और कृतवर्मा तुरन्त प्रस्थान करते हैं -

ततो द्रौणिः कृपः शल्यो हार्दिक्यश्च महारथः ।
प्रत्युद्ययुस्तदा पार्थं सूतपुत्र परीप्सया ।। ४६ ।।

हिन्दी साहित्य में अश्वत्थामा

१. धर्मवीर भारती की प्रसिद्ध रचना 'अंधा युग' (लेखन काल १९५४) पढ़ी तो आनन्द हुआ किन्तु अश्वत्थामा के प्रति वे भी उदार नहीं हैं। उसे क्रूर कर्मा और कुछ सीमा तक विक्षिप्त मस्तिष्क वाला चित्रित किया है जो उस महावीर और विद्यावान का यथार्थ रूप नहीं था। वह आशुकोपी है, क्रोधावेश में निष्ठुर हो जाता है, भयानक योजना बनाकर हिंसा का ताण्डव भी कर देता है, किन्तु विक्षिप्त नहीं है। भारती जी ने उसे विक्षिप्त की भाँति कृतवर्मा के विरुद्ध ही शस्त्र उठाता हुआ चित्रित किया है। उत्तरा के गर्भ पर पूर्वनिश्चित योजना के अनुसार प्रहार करना दिखाया है और व्यास जी को केवल व्यास कहलाकर उसे अशिष्टाचारी भी कर दिया है। उसे इस सीमा तक विक्षिप्त दिखाया है कि वह झाड़ियों में छिपकर निहत्थे बूढ़े आदमियों पर हमला करता है।

यह चित्रण उस दिव्यास्त्रधारी का नहीं हो सकता, जिसने नारायणास्त्र चलाकर सबके हथियार डलवा दिये थे।

२. श्री लक्ष्मी नारायण मिश्र कृत नाटक 'अपराजित' मेरी दृष्टि में अब तक अश्वत्थामा पर किसी कवि की सर्वप्रथम रचना है, जिसमें उसे नायक बनाया गया है। रचना बड़ी प्रभावोत्पादक है। अश्वत्थामा के चरित्र का सर्वाङ्गपूर्ण जीवन्त चित्रण किया गया है।

किन्तु श्रृंगार रस के निर्वाह के लिए नाटक में अश्वत्थामा की आयु महाभारत युद्ध के दिनों में भी ३० वर्ष बतायी है और उसका विवाह गांधार देश के राजपुरोहित की पुत्री माधवी से होने का वर्णन किया गया है, जो कोमल और रुचिर है।

किन्तु एक दृष्टि से यह महाभारत से मेल नहीं खाता। महाभारत में उल्लेख है कि कृपाचार्य व अश्वत्थामा दोनों ही कुरुवंशी राजकुमारों को, जिनमें पाण्डव भी हैं, धनुर्विद्या सिखाते थे।

स नागपुरमागम्य गौतमस्य निवेशने ।
भारद्वाजोऽवसत् तत्र प्रच्छन्न द्विजसत्तम ।। १४ ।।

ततोऽस्य तनुजः पार्थान् कृपस्यान्तरं प्रभुः ।
अस्त्राणि शिक्षयामास नावुध्यन्त च तं जनाः ।। १५ ।।

- आदि पर्व, संभव पर्व

अतः अश्वत्थामा पाण्डव से आयु में बड़े न सही समवयस्क अवश्य रहे होंगे।

श्रीमद्भागवत में उल्लेख है कि देवताओं ने आकर कृष्ण से कहा, हे प्रभो अब आपको पृथ्वी पर आए १२५ वर्ष हो चुके हैं।

यदुवंशेऽवतीर्णस्य भवतः पुरुषोत्तम् ।
शरच्छतं व्यतीयाय पंचविंशाधिक प्रभो ।। २५ ।।

- श्रीमद्भागवत् ११वाँ स्कन्ध षष्ठ अध्याय

उस समय युधिष्ठिर ३६ वर्ष तक राज्य कर चुके थे, अर्थात महाभारत की घटना ३६ वर्ष पहले हो चुकी थी।

एवं पश्यन् हृषीकेशः सम्प्राप्तं कालपर्ययम् ।
त्रयोदश्यामवावस्यां तान् दृष्टवा प्राब्रवीदिदम् ।।१८।।

चतुर्दशी पंचदशी कृतेयं राहुणा पुनः ।
प्राप्ते वै भारते युद्धे प्राप्ता चाद्य क्षयाय नः ।।१९।।

विमृशन्नेव कालं तं परिचिन्त्य जनार्दन ।
मेने प्राप्तं स पट्त्रिंप वर्षं वै केशिसूदनः ।।२०।।

- मौसल पर्व द्वितीय अध्याय

इस प्रकार श्री कृष्ण अवतारी शरीर में युद्ध के समय १२५ - ३६ = ८९ वर्ष के थे। वे युधिष्ठिर को अग्रज कहते थे, अतः वे ९० वर्ष के अवश्य होंगे। भीम दो वर्ष छोटे थे, वे ८८ से ९० के रहे होंगे। अतः अश्वत्थामा को यदि हम समवयस्क माने तो वह भी महाभारत युद्ध में ८५ से ९० वर्ष की आयु का था।

महाभारत काल में आयु लम्बी होती थी। द्रोण ४०० वर्ष के थे।

आकर्णपलितः श्यामो वयसाचार्गीतिपंचकः ।
त्वत्कृते व्यचरन् संख्ये स तु षोडश वर्षवत् ।।

भीष्म १७५ वर्ष के थे, जब उनका देहान्त हुआ। किन्तु अभिमन्यु का १६ वर्ष की अवस्था में ही उत्तरा से विवाह कर उत्तरा का गर्भ धारण सिद्ध करता है कि युवावस्था १६ वर्ष की आयु से ही प्रारंभ हो जाती थी।

किन्तु मूल कथा में यह परिवर्तन यदि कृति की चारूता बढ़ाने और नायक का उत्कर्ष दिखाने के लिए किया जाए तो स्वागत योग्य है। हाँ कल्पना का प्रयोग चरित्र हनन के लिए या स्थापित तथ्यों से प्रतिकूल की स्थापना के प्रयास में करना साधु नहीं माना जा सकता जैसा कि कुछ कवियों / लेखकों ने किया है।

३. हिन्दी काव्य में श्री मैथिली शरण गुप्त जी कृत ''जय भारत'' में ''द्रोणाचार्य'' तथा ''हत्या'' नामक सर्ग में अश्वत्थामा का वर्णन किया है। संक्षेप में ही कविवर ने बहुत कुछ कह दिया है। दोनों सर्ग बड़े सारगर्भित है। हत्या सर्ग में अश्वत्थामा की क्रूरता, नृशंसता का युधिष्ठिर व द्रौपदी के शोक का और अश्वत्थामा को दण्डित किए जाने का वर्णन संक्षेप में है, जो महाभारत के अनुसार चलता है और परंपरा से प्राप्त चरित्र का पोषण किया गया है।

'जय भारत' में द्रोण को राजकुमार भीष्म के पास ले गए वर्णित है। किन्तु महाभारत में युधिष्ठिर के मुख से उनका विवरण सुनकर भीष्म स्वयं द्रोण से मिलने आते हैं और सादर राजमहल ले जाते हैं -

चलिए कृपया, पूज्य पितामह जहाँ हमारे ।
यों कहकर ले गए उन्हें वे राजदुलारे ।।
लिया भीष्म ने उन्हें भवन में सादर सविनय ।

'हत्या' सर्ग में गुप्त जी ने भी अश्वत्थामा के कृत्य का वर्णन इन शब्दों में किया है -

सोया था धृष्टद्युम्न, उसे धर गला घोंट कर मारा ।
हलचल होने से चौंक-चौंक कर इधर उधर जन आये ।
कृष्णा के उठते पाँच पुत्र भी उसने काट गिराये ।।

द्रोपदी गुरुपुत्र का मुँह नहीं देखना चाहती -

मैं क्या उसका मुख देख सकूँगी, उसे यहाँ मत लाना ।
वह भूला अपना मनुष्यत्व, तुम अपने को न भुलाना ।।

अश्वत्थामा का चित्रण वे इस प्रकार से कहते हैं -

मरता क्या करता नहीं, सँभल झट हँसा ठठाकर पापी ।
पर व्यर्थ देख सब शस्त्र अन्त में हुआ उग्र अभिशापी ।।

तुम राक्षसत्व तो देख चुके, ब्रह्मत्व देखना मेरा ।
मर जाए उत्तरा गर्भ जात, घर में भर जावे अंधेरा ।।

मुनियों ने निर्णय किया, मारना तो है उसे बचाना।
तब है जब आधि व्याधि, कोप गल गल कर पड़े पचाना।।

पर प्राप्त इसे है एक दिव्य मणि, केश काट वह ले लो।
ऐसा ही करके कहा पार्थ ने जाओ जीवन झेलो।।

४. डा० राम कुमार वर्मा की रचना "एकलव्य" है। यद्यपि इसमें द्रोणाचार्य का विशद वर्णन किया गया है, किन्तु अश्वत्थामा का उल्लेख नहीं है, क्योंकि ऐसा कोई प्रसंग नहीं आता है।

५. श्री नरेन्द्र कोहली जी की रचना "महासमर" के भाग दो "अधिकार" में कृप, कृपी, द्रोण व अश्वत्थामा का विस्तृत चित्रण किया गया है। यह बहुत हृदयस्पर्शी, मौलिक, मानवीय मनोभावों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति युक्त विश्लेषणपरक और तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था का यथार्थ चित्रण करने का सफल उद्यम है। वे सामाजिक विसंगतियाँ आज के लिए उतनी ही प्रासंगिक हैं।

द्रोण की सिद्धांतवादिता, विद्याप्रेम, उच्च आदर्श, परिवार व जागतिक विषयों के प्रति उदासीनता, निर्धनता, स्वाभिमान, परशुराम से विद्याप्राप्ति, द्रुपद कृत अपमान, हस्तिनापुर गमन, गुप्त निवास, कुरु कुमार आचार्यत्व, गुरु दक्षिणा स्वरूप शिष्यों से द्रुपद की पराजय, उसके राज्यार्ध का ग्रहण सब महाभारत के अनुसार वर्णित है। ऋषि से आचार्य बनकर सिद्धांतों से समझौता करके वे प्रसन्न नहीं हैं और न उनकी साध्वी पत्नी कृपी, किन्तु विपन्नता से भी अधिक द्रुपद कृत अवमानना से क्षोभ व प्रतिहिंसा की भावना से वे प्रेरित हैं।

महाभारत से प्रतिकूलता केवल उन वर्णनों में है, जहाँ द्रोण को कायर, युद्ध के वास्तविक अनुभव से हीन, केवल सैद्धान्तिक शस्त्रज्ञ, अपने उद्देश्य पूर्ति में हस्तिनापुर में कुरु कुमारों व सेना का कूटनीति पूर्वक उपयोग करने वाला बताया गया है।

अश्वत्थामा के प्रति स्नेह, उन्हें उसके प्रति पक्षपाती विद्यादान में भी बताता है। यह अस्वाभाविक नहीं है।

द्रुपद का व्यवहार राजोचित है, शालीन है, मर्यादित है, द्रोण के प्रत्येक कथन का उत्तर संयत किन्तु दृढ़ शब्दों में देते हुए बिना अशिष्टता के अपना मन्तव्य और निर्णय प्रकट कर देता है। यहाँ कोहली जी ने उसके चरित्र की रक्षा की है।

राजकुमारों की असमर्थता पर उन्हें तथा उनके गुरु को भी अज्ञानी बताना, यह जानते हुए भी की स्वयं उनके श्यालक कृप उनके गुरु हैं, द्रोण जैसे व्यक्ति से निन्दा करवाना द्रोण के चरित्र को न्यून करना है।

भीष्म द्वारा द्रोण को आचार्य पद देने से पहले उनसे राजनैतिक विषय पर पूछताछ करना भी महाभारत के प्रतिकूल है।

द्रोण द्वारा गंगा तट पर स्थापित नई युद्धशाला का उद्देय शिष्यों को दुर्धर्ष योद्धाओं में परिवर्तित करना हो सकता है। किन्तु यह कहना कि उनका उद्देश्य आर्यावर्त का निर्विवाद सैनिक अधिनायक अपने शिष्यों के बल पर बनना था और यह

कल्पना करना कि परशुराम की तरह उन्हें भी समस्त क्षत्रियों से घृणा है और इन योद्धाओं को वे इतना हिंसक बना देंगे कि वे लड़कर सर्वनाश कर लेंगे। क्षत्रिय जाति विनाशार्थ ऐसी भयानक योजना उन ज्ञानी विप्र के मन में नहीं उपज सकती।

सूतपुत्र कर्ण का तथा भील पुत्र एकलव्य का शिष्यत्व ठुकरा देना एकलव्य का अँगूठा दक्षिणा में राजनैतिक उद्देश्यों से माँग लेना द्रोण के जाति गत विद्वेष दंभ और कूटनीतिज्ञता दिखाते हैं, यह महाभारत के अनुसार ही है।

द्रोण का अंतर्द्वन्द्व कि किस प्रकार साधनाच्युत होकर वे ऋषि पद से वंचित हो आचार्य भर रह गए हैं। राज्य के निष्ठावान कर्मचारी बनकर रह गए हैं, बहुत प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया गया है। उन्होंने अपनी साधना की पूर्णता में ज्ञान नहीं पाया, वे युद्धा चार्य या धनुर्वेदाचार्य बनकर रह गए हैं।

अश्वत्थामा हठी हो सकता है, किन्तु पिता की अवज्ञा नहीं कर सकता, उसके मुख से यह कहलवाना उचित नहीं लगता -

''आपका सर्वप्रिय शिष्य है अर्जुन और मेरा मित्र है दुर्योधन। यदि हम दोनों अपने - अपने पक्षों पर अड़े रहे तो हमारा भविष्य एक दूसरे से पृथक भी हो सकता है और भिन्न भी।''

आगे का कथन उसे स्वार्थी और अवसरवादी प्रमाणित करता है -

''मुझे अर्जुन प्रिय नहीं है। वह बहुत आत्मकेन्द्रित लगता है मुझे। फिर भी मैं आपको वचन देता हूँ कि यदि अर्जुन विजयी हुआ तो मैं दुर्योधन का पक्ष छोड़कर पाण्डवों का मित्र बन जाऊँगा। आप कर्ण और अर्जुन की प्रतियोगिता होने दें।''

अश्वत्थामा को प्रारम्भ से ही दुर्योधन का पक्षपाती और अर्जुन तथा अन्य पाण्डव बंधुओं का विरोधी बताया गया है, जो सत्य नहीं है। अपने पिता पर दुर्योधन को युधिष्ठिर से अधिक योग्य घोषित करने के लिए दबाव डालना ताकि वह युवराज घोषित हो जाए भी अश्वत्थामा के चरित्र को गिराता है।

भीष्म जैसे महान व्यक्ति से यह बयान करावाना कि आचार्य द्रोण ने कौरव पाण्डवों को द्रुपद से युद्ध में क्यों झोंका, स्वयं या अपने पुत्र को क्यों नहीं भेजा। वे राजनैतिक लाभ हस्तिनापुर के मूल्य पर ले रहे हैं, वे कौरव पाण्डवों में दरार डाल रहे हैं और तो और - ''भीष्म को लगा कि हस्तिनापुर की अपनी ही कठिनाइयाँ कम नहीं थीं, अब अपने आँगन में द्रोण रूपी विषवृक्ष का वर्धन कर उसने कुछ और कठिनाइयों को बलात् अपने ऊपर ओढ़ लिया है।

श्री नरेन्द्र कोहली कृत महासगर में यथास्थान अश्वत्थामा का चरित्र चित्रण किया गया है। रचनाकार ने अश्वत्थामा को बहुत उदार एवं मानवीय गुणों से भरपूर बताया है। आवश्यकता पड़ने पर वह युधिष्ठिर के प्रति आदर एवं अर्जुन के प्रति प्रेम प्रदर्शन में पीछे नहीं रहा। नारी के प्रति सदैव सम्मान दर्शाया। दुर्योधन व कर्ण चर्चा के दौरान कुछ टिप्पणियाँ पाण्डवों पर करते हैं। अश्वत्थामा को अर्जुन के विषय में ऐसी चर्चा अच्छी नहीं लगी। वह उसके पिता का प्रिय शिष्य था। वे आज भी उससे प्रेम करते थे। 'पुंसत्वहीन नहीं हैं पाण्डव!' अश्वत्थामा कुछ उग्र स्वर में बोला- 'वे

तपस्वियों के समान संयमी है। उनके जीवन में कामभोग का केवल आंशिक महत्व है। वे पाँचों भाई अपनी मूल्यवान से मूल्यवान वस्तु को भी मात्र व्यक्तिगत नहीं समझते। स्वार्थी नहीं हैं वे।' वह कर्ण की भर्त्सना करता है - और अंगराज तुम तो सदा द्रोपदी के चरित्र को लांछित करने का प्रयत्न करते रहते हो। वह मात्र अपनी पराजय का प्रतिशोध लेने के लिए उसे देखते ही तुम तृष्णा से जलने लगते हो तुम्हारी हताशा प्रतिहिंसा में परिणत हो जाती है।

द्यूतक्रीड़ा के अवसर पर भी तुमने यही किया वह कहता है - गम्भीर चर्चा के लिए और ठीक-ठाक निष्कर्षो के लिए व्यक्ति की दृष्टि निष्पक्ष होनी चाहिए और यथार्थ वादी होनी चाहिए उसमें वासना ईर्ष्या और संकीर्णता होगी तो उचित निष्कर्ष कहाँ से प्राप्त होंगे। एक स्थान पर वह कर्ण एवं दुर्योधन से स्पष्ट शब्दों में कहता है - मैं अपने शत्रु की पुत्री का वध तो कर सकता हूँ किन्तु उसे नग्न नहीं कर सकता, उसके प्रति व्यभिचार की कल्पना नहीं कर सकता। (भाग ५ ''अंतराल'' पृष्ठ २४२) इसके साथ ही वह अपने मित्र दुर्योधन के लिए इतना विश्वसनीय भी है कि एक अवसर पर दुर्योधन अपने पिता से कहता है कि द्रोणाचार्य व कृपाचार्य वहीं रहेंगे जहाँ अश्वत्थामा, और अश्वत्थामा हमारे साथ है। (भाग ३ ''कर्म'' पृष्ठ ५७)।

अश्वत्थामा भी दुर्योधन का वैसा मित्र नहीं हो पाया जैसा उसे होना चाहिए था। दुर्योधन अपने लाभ की दृष्टि से सारी घटनाओं को देख रहा था। अश्वत्थामा और अर्जुन में न कोई प्रतिस्पर्धा थी न कोई ईर्ष्या। अतः अर्जुन वध के लिए उसे कर्ण पर अधिक भरोसा था - कर्ण की क्षमता किसी भी रूप में अश्वत्थामा से अधिक नहीं थी किन्तु कर्ण के मन में अर्जुन के प्रति जैसी घृणा थी वैसी अश्वत्थामा के मन में कैसे हो सकती है।

अश्वत्थामा अपने पिता से स्वीकार करता है कि आरंभ में मैं दुर्योधन की ओर आकृष्ट हुआ था किन्तु एक ऐसा समय आया जब न केवल उस आकर्षण का विकास रुक गया वरन कुछ ह्रास भी हुआ मस्तिष्क के परिपक्व होने पर वैभव मेरे लिए आकर्षण का कारण नहीं रहा और युवराज तथा उनके मित्रों की गोष्ठियों में कोई ऐसा उदात्त तत्व नहीं था जो मुझे आकृष्ट करता। उनके निकट रहकर कोई अपनी आत्मा का विकास नहीं कर सकता उसका हनन अवश्य कर सकता है।

६. राम कुमार भ्रमर की महाभारत पर आधारित उपन्यास माला के अंतर्गत १२ उपन्यासों में से ''अनुगत'' में अर्जुन के जीवन से सम्बन्धित घटनाक्रम वर्णित है। इसी के अन्तिम कुछ पृष्ठों में अश्वत्थामा द्वारा ब्रह्मशिर नामक दिव्यास्त्र के प्रक्षेप का वर्णन है। अन्त में वह ब्रह्मशिर अस्त्र को व्यास जी के कहने पर लौटाने में सफल नहीं होता, किन्तु दिशा अवश्य बदल देता है और उसके प्रभाव से उत्तरा के गर्भ का बालक निर्जीव पैदा होता है, जिसे श्रीकृष्ण अपनी यौगिक शक्ति से जीवित करते हैं। यह विवरण महाभारत कथा के अनुकूल है। 'असाध्य' नामक उपन्यास में श्री भ्रमर जी ने दुर्योधन का वर्णन किया है। उस के बाद घायल दुर्योधन द्वारा अश्वत्थामा को सेनापति के रूप में अभिषेक उसकी प्रतीक्षा में प्राण - धारण और अश्वत्थामा द्वारा पाञ्चाली - पुत्रों व पाञ्चालों के वध का समाचार मुमूर्षु दुर्योधन को सुनाना वर्णित है।

श्री मनु शर्मा द्वारा लिखित वृहत उपन्यास ''कृष्ण की आत्मकथा'' में भी कथा में विचित्र परिवर्तन किया गया है। आकाश में उठती हुई दो शक्तियों को देखकर कृष्ण समझ जाते हैं कि ये अर्जुन व अश्वत्थामा द्वारा प्रक्षिप्त है। वे उस स्थल पर पहुँचते हैं, दोनों को समझाते हैं और उनका आग्रह मानकर दोनों वीर शक्ति को लौटा लेते हैं।

अश्वत्थामा को भीम द्वारा पकड़े जाने का वृत्त भी काल्पनिक है, वे कृष्ण की आज्ञा से द्रौणि को ढूढते हुए जाते हैं, जहाँ दुर्योधन के शव को द्रौणि पत्तों में छिपाने का प्रयास करता हुआ मिलता है। श्रीकृष्ण भी को चुपके से द्रौणि पर गदा प्रहार करने की आज्ञा देते हैं। वे पीछे से आकर असावधान द्रौणि पर गदा प्रहार शिर पर कर मूर्च्छित कर देते हैं। मूर्च्छित द्रौणि को बाँध कर रथ पर डालकर कृष्णा के पास लाया जाता है। कृष्णा उसके बध की कामना करती है किन्तु कृष्ण उसकी मणि मस्तक से निकाल लेने और उसे छोड़ देने का सुझाव देते हुए कहते हैं कि मणि निकल जाने पर यह तीन हजार वर्षों तक छटपटाता रहेगा। इस प्रकार लेखक मूल कथा से वहुत दूर चला गया है।

डॉ. जे. आर. वोरसे का शोध प्रवन्ध ''स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी काव्य में महाभारत के पात्र'' जो सन् २००० में प्रकाशित हुआ के अध्ययन से ज्ञात होता है कि अश्वत्थामा के विषय में १९९२ तक कई ग्रन्थ लिखे गये।

नरेन्द्र शर्मा के ''उत्तर जय'', नरेश मेहता के ''महाप्रस्थान'' डॉ. किशोर कावरा के ''नरो वा कुंजरो'' में अश्वत्थामा का चित्रण है।

उदयशंकर भट्ट के गीतिनाट्य अश्वत्थामा में उसे नायकत्व प्रदान किया गया है। अश्वत्थामा पर एकमात्र महाकाव्य १९८१ में प्रकाशित डॉ. रत्न चन्द्र शर्मा द्वारा प्रणीत अश्वत्थामा है।

मुझे इन ग्रन्थों के अध्ययन का सुयोग अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है किन्तु इतना निश्चित है कि अश्वत्थामा को नायकत्व प्रदान करने वाला मैं प्रथम कवि नहीं हूँ।

अन्य भारतीय भाषाओं में अश्वत्थामा

१. प्रतिभा राय का उत्कृष्ट उड़िया उपन्यास ''याज्ञसेनी'' का शंकर लाल पुरोहित कृत हिन्दी रूपान्तरण ''द्रौपदी'' पढ़ा। इसमें पुत्रघाती अश्वत्थामा को दण्डित करने के लिए कहने वाली द्रौपदी यह ध्यान में रखते हुए उसे क्षमा कर देती है कि गुरुपत्नी को पुत्र शोक न हो, जबकि भीम उसे द्रौपदी के कहने पर ही पकड़कर लाते हैं। यहाँ द्रौपदी की उदारता दिखाई गई है, ऐसा अन्य ग्रन्थों में भी वर्णन मिलता है। किन्तु महाभारत से इसमें स्पष्ट अंतर है। मूल महाभारत में युद्ध के बाद भीम, अर्जुन, कृष्ण, वेदव्यास और नारदजी की उपस्थिति में व्यास के कहने पर अश्वत्थामा अपनी भालस्थ मणि पाण्डवों को अर्पित कर कृष्ण से अभिशप्त हो वन - गमन कर जाता है। बंदी बनाकर नहीं लाया जाता, द्रौपदी को वह मणि भेंट की जाती है। पाँचों पुत्रों की सोते समय हत्या अश्वत्थामा ने की यह उल्लेख इस पुस्तक में भी है।

२. श्री पन्ना लाल पटेल ने अपनी रचना ''पार्थ से कहो चढ़ाए वाण'' के भाग

५ में द्रोण वध, अश्वत्थामा की प्रतिक्रिया, कर्ण को सेनानायक बनाने का प्रस्ताव, नारायणास्त्र का प्रयोग, अर्जुन पर अग्नेयास्त्र का प्रयोग, दिव्यात्र प्रयोग में असफलता पर क्षोभ, व्यास जी द्वारा हस्तक्षेप आदि महाभारत के अनुसार ही वर्णित है। किन्तु अश्वत्थामा द्वारा स्वयं मुमूर्षु दुर्योधन से यह कहना - हे राजन, अब विलम्ब किए बिना मुझे कौरव सेनापति बना दीजिए, महाभारत के प्रतिकूल है।

प्रसन्नता का विषय है कि श्री पटेल ने यह नहीं कहा कि द्रौपदी के पाँचों पुत्रों को सोते हुए मारा गया। उन्होंने महाभारत के अनुरूप लिखा है -

संजय पुनः कहने लगा - "हे कृपानाथ, मामा के शिविर में रहने वाले द्रौपदी के पाँचों पुत्र अश्वत्थामा पर टूट पड़े। किन्तु एक - एक कर पाँचों मुत्यु की गोद में चले गए। शिखण्डी को भी अश्वत्थामा ने एक ही बार में समाप्त कर दिया।"

अश्वत्थामा द्वारा ब्रह्मशिर अस्त्र का प्रयोग, उसे लौटाने का उद्यम, उसकी असफलता व विवशता, व्यास से पश्चाताप महाभारत के अनुसार ही है। अश्वत्थामा द्वारा पाण्डवों से संधि करने का परामर्श दुर्योधन को देना यथा तथ्य वर्णित है। कृष्ण द्वारा दिए गए शाप का उल्लेख - ३००० वर्षो की अवधि भी महाभारत के अनुसार ही है।

३. श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी द्वारा रचित "महाभारत कथा" में प्रायः कथा महाभारत के अनुसार ही वर्णित है, किन्तु अनेक स्थानों पर लेखक ने कुछ हटकर वर्णन किया है। अश्वत्थामा के सम्वन्ध में अध्याय ६४ एवं ६५ में वर्णन है कि जंगल में रात्रि के समय एक अकेले उल्लू ने कौवों के दल पर आक्रमण कर उन्हें मार डाला, इसी प्रेरणास्वरूप अश्वत्थामा ने कृपाचार्य एवं कृतवर्मा के साथ मिलकर शिविर में सोते हुए धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, पाँचों द्रौपदी - पुत्रों का संहार बड़ी क्रूरता एवं निर्ममता से किया तथा शिविर में आग लगाकर घृणित कार्य किया। उत्तरा के गर्भ पर दिव्यास्त्र प्रक्षेपित किया, भीम से द्वन्द्व युद्ध किया और उससे परास्त होकर मणि छिन जाने पर वन भाग गया।

४. श्री शिवाजी सावंत के उपन्यास "मृत्युंजय" में अश्वत्थामा का चरित्र एक सजीले, विनम्र, मेधावी, ज्ञानवान, और तेजस्वी युवा के रूप में किया गया है।

मंगलाचरण

महायोगेश्वर फिर भी जिन्हें कनकप्रियता से लगा न दोष ।
रुद्र कहलाते फिर भी जिन्हें नहीं भूतों के प्रति कुछ रोष ।
विषम लोचन होकर भी ईश सदा रहते जनपर समदृष्टि ।
महाकालेश्वर भीम कठोर उग्र हैं तदपि कृपा की वृष्टि ।।०१।।

धारते योग भोग एकत्र जटिल होकर भी सरल प्रकाम ।
कोटि सविता सम जिनका धाम तदपि शशिधर हैं यदपि अकाम ।
वामता किसने की अनुभूत रखा जो वामदेव अभिधान ।
सत्य यदि वामदेव कथं हुए कामारि न होता ज्ञान ।।०२।।

मिटाते शाश्वत जो भवभीति स्वयं भव हैं विचित्र यह तथ्य ।
यज्ञमय होकर करते ध्वंश यज्ञ का यह भी घटना सत्य ।
सहस्रशीर्षा होकर भी जिन्हें नित्य कहता पंचानन लोक ।
कहाते अष्टमूर्ति हैं तदपि एक हैं व्याप्त करें सब लोक ।।०३।।

देवताओं के अधिपति मान्य कहाते फिर भी पशुपतिनाथ ।
सर्वदा है अक्रिय निरपेक्ष यदपि परिणीत शक्ति के साथ ।
जगत् के पिता शास्त्र में वर्ण्य जनित बस किन्तु एक ही पुत्र ।
पुरुष है अद्वितीय किस भाँति अर्धनारीश्वर पर प्रतिभात ।।०४।।

असुर तक यदि होता है विनत प्राप्त करता जिनसे वरदान ।
सदा शिवशंकर लोकों हेतु यदपि करते संहार महान ।
गरल लेते देते अमरत्व तपोमय हैं फिर भी नटराज ।
करें मुझपर करुणा दें ज्ञान हरें सद्यः मम दुरित समाज ।।०५।।

तरल लोचन जन रहे न कहीं व्यथा पाये एक भी भूत ।
मिटे आवरण और विक्षेप ज्ञात निज रूप मुदित सुप्रभूत ।
भ्रमण यह दीर्घ वेदनापूर्ण मिटे पाये प्राणी विश्राम ।
अखण्डानदमग्न जन रहे शमितनश्वररति गतअभिमान ।।०६।।